भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ

1939 में स्थापित भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ का उद्देश्य व्यक्ति के जीवन की गुणवत्ता में, शिक्षा के माध्यम से अभिवृद्धि करना है, जिसे यह निरन्तर एवं आजीवन प्रक्रिया के रूप में देखता है। संघ प्रौढ़ शिक्षा को एक प्रक्रिया, कार्यक्रम और आन्दोलन के रूप में गतिशील बनाने की दिशा में प्रतिबद्ध है।

संघ प्रौढ़ शिक्षा के प्रसार में कार्यरत स्वंयसेवी संगठनों, विश्वविद्यालयों, शासकीय, राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं के कार्यकलापों से समन्वय करता है। संगोष्ठियों एवं सम्मेलनों का आयोजन और प्रौढ़ शिक्षा के विभिन्न आयामों पर निरंतर सर्वेक्षण तथा शोध के साथ, संघ अपने सदस्यों की प्रौढ़ शिक्षा विषयक जानकारी में नवीनता एवं प्रखरता बनाए रखने के लिए समूचे विश्व में अद्यतन विचार और अनुभव प्रस्तुत करने का निरन्तर प्रयत्न करता रहता है। प्रौढ़ शिक्षा के क्षेत्रों में अनुसंधान हेतु विभिन्न प्रयोगात्मक परियोजनाएं भी संचालित करता है। अपनी नीतियों के अनुसरण में संघ ने 'नेहरू साक्षरता पुरस्कार' एवं महिलाओं में निरक्षरता निवारण कार्य हेतु 'टैगोर साक्षरता पुरस्कार' की स्थापना की है। डा. जाकिर हुसैन स्मृति व्याख्यान प्रतिवर्ष किसी मूर्धन्य शिक्षाविद् द्वारा दिया जाता है। संघ हिन्दी एवं अंग्रेजी शोध कार्य के लिए डा. मोहन सिंह मेहता फेलोशिप भी प्रदान करता है।

संघ का अमरनाथ झा पुस्तकालय प्रौढ़, सतत् और जनसंख्या शिक्षा की सन्दर्भ सामग्री की दृष्टि से देश में अद्वितीय है। विविध सन्दर्भ पुस्तकों के संकलन के अतिरिक्त देश और विदेश से प्रकाशित प्रौढ़ शिक्षा संबंधी पत्र–पत्रिकाएं, सूचना एवं संदर्भ सामग्री भी इसमें उपलब्ध है। संघ, नेशनल इन्फार्मेटिक सेण्टर इंडिया इण्टरनेशनल सेंटर द्वारा प्रायोजित डेलनेट से भी सम्बद्ध है। संघ द्वारा अभी हाल में प्रौढ़ एवं जीवनपर्यन्त अन्तर्राष्ट्रीय शिक्षा संस्थान (इंटरनेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ एडल्ट एंड लाईफलॉंग एजूकेशन) की स्थापना भी कर दी गई है।

संघ प्रौढ़ शिक्षा विषय पर अनेक पुस्तकें व पत्रिकाएं प्रकाशित करता हैं, जो कि मुख्यतः प्रौढ़ शिक्षा कर्मियों और नवसाक्षरों के लिए है। संघ 'इण्टरनेशनल फेडरेशन आफ वर्कर्स एजूकेशनल एसोसिएशन्स' एवं 'एशियन साउथ पेसेफिक ब्यूरो आफ एडल्ट एजूकेशन' एवं 'इण्टरनेशनल कौंसिल आफ एडल्ट एजूकेशन' से भी सम्बद्ध है। संघ की सदस्यता उन सभी व्यक्तियों एवं संस्थाओं के लिए खुली है जो इसके आदर्शों एवं लक्ष्यों में विश्वास रखते हैं।

भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ

17–बी इन्द्रप्रस्थ एस्टेट, महात्मा गांधी मार्ग, नई दिल्ली–110002
दूरभाषः 011–23379282, 23378436, 23379306
फैक्सः 011–23378206, ई–मेलः proudhshiksha@gmail.com
directoriaea@gmail.com
website: www.iaea-india.org; www.iiale.org

प्रौढ़ शिक्षा

फरवरी 2010
वर्ष 53 अंक–7

सम्पादक मण्डल

संरक्षक
प्रो. भवानी शंकर गर्ग

अध्यक्ष
कैलाश चौधरी

इन्दिरा पुरोहित
ए.एच.खान
प्रफुल्ल नागर
के.आर. सुशीले गौडा
डा. विद्याविन्दु सिंह
डा. मदन सिंह

सहायक सम्पादक
बी. संजय

टंकण एवं रूपसज्जा
कृष्ण सिंह

इस अंक में

सम्पादकीय 2

सरकारी, निजी अनुदानित तथा निजी गैर–अनुदानित विद्यालयों के अध्यापकों की भूमिका–द्वन्द्व की समस्या का अध्ययन
– भरत टाक 3

अनुसूचित जनजातियों में वंचना और विकास–एक विश्लेषण
– एच.सी. जैन एवं कृष्ण कुमार शुक्ला 11

साक्षर भारत–शिक्षित भारत
– संजय कुमार 18

शब्द ब्रह्म है
–ओम प्रकाश शर्मा 19

अपनी कहानी सुनायेंगे हम....
– मृदुला सेठ 21

राष्ट्रपति द्वारा राष्ट्र को संबोधन 25

कन्या भ्रूण हत्या : माता–पिता की जबावदेही
– अनूपी समैया 31

Dr Lalage Bown: The Privileged Lived for Unprivileged!
-Amruth G Kumar 38

मूल्यः 100 रूपये वार्षिक

पत्रिका में व्यक्त लेखकों के विचार उनके वैयक्तिक विचार हैं जिनसे संघ एवं सम्पादकीय सहमति अनिवार्य नहीं है ।

रोजगार गारंटी योजना : वायदे और व्यवहार

इस सदी के प्रथम मौजूदा दशक में सरकार द्वारा आम जनता के विकास तथा उसके परिणामस्वरूप उच्च राष्ट्रीय विकास दर हासिल करने के लिए जो महत्वपूर्ण कदम उठाए गए उनमें राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन, सूचना का अधिकार, महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार अधिनियम, मुफ्त तथा अनिवार्य शिक्षा का अधिकार तथा साक्षर भारत कार्यक्रम प्रमुख हैं। इन सबमें भी कई तो भारत सरकार के प्रतिनिधि तथा अति महत्वाकांक्षी कार्यक्रम रहे। खासतौर से राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम, जो अब महात्मा गांधी राष्ट्रीय रोजगार गारंटी अधिनियम के नाम से जाना जाता है, से राष्ट्रव्यापी अपेक्षा रही। आज से चार वर्ष पूर्व जब यह अधिनियम लागू हुआ तब देश के दूरदराज के क्षेत्रों में रहने वाले लोगों में भी आशा की किरणें दिखने लगी।

गत 2 फरवरी, 2010 को इस अधिनियम के चार वर्ष पूरे होने के उपलक्ष्य में आयोजित सम्मेलन को स्वयं प्रधानमंत्री डा. मनमोहन सिंह ने संबोधित किया। डा. सिंह ने यह घोषणा करते हुए अपार खुशी जाहिर की कि मात्र मौजूदा वर्ष में ही इस अधिनियम के चलते तकरीबन चार करोड़ परिवारों को रोजगार मिला है। उन्होंने कहा कि इससे यह स्पष्ट होता है कि गरीबों को सामाजिक सुरक्षा मुहैया कराने के अपने मकसद में यह योजना काफी हद तक कामयाब हुई है। डा. सिंह के अनुसार 2009–10 के वित्तीय वर्ष में इस रोजगार योजना में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों की हिस्सेदारी 52 प्रतिशत रही तथा आदिवासी बहुल जिलों में प्रत्येक परिवार को 65 दिन का औसत रोजगार मिला जो 48 दिनों के राष्ट्रीय औसत से कहीं ज्यादा है। प्रधानमंत्री ने इस बात पर भी हर्ष जाहिर किया कि संपूर्ण योजना के लाभार्थियों में लगभग 50 प्रतिशत हिस्सेदारी महिलाओं की है।

निश्चित ही ये उपलब्धियां काबिले तारीफ हैं। लेकिन यह भी गौरतलब है कि गत 4 जून, 2009 को मौजूदा सरकार के गठन के उपरांत संसद के संयुक्त अधिवेशन में सरकार द्वारा यह वादा किया गया था कि सौ दिनों के अंदर ही राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम की पारदर्शिता और जनता के प्रति जवाबदेही सुनिश्चित करने के लिए सामाजिक लेखा परीक्षा लागू किया जाएगा एवं शिकायत निवारण के लिए जिला स्तर पर लोकायुक्त की नियुक्ति की जाएगी जो अभी भी क्रियान्वयन की मोहताज है। सरकार से आम जनता इस दिशा में शीघ्र पहल की अपेक्षा रखती है।

बहरहाल, 2 फरवरी के अपने संबोधन में प्रधानमंत्री की यह अपेक्षा, कि कामगारों की दक्षता में बढ़ोतरी लाने के लिए उनकी जानकारी बढ़ाना बहुत जरूरी है और यह कार्य सरकार रोजगार गारंटी योजना को साक्षरता (साक्षर भारत) और प्रशिक्षण कार्यक्रमों से जोड़ते हुए पूरा करेगी, निश्चित ही देश में चल रहे साक्षर भारत एवं प्रौढ़ तथा आजीवन शिक्षा कार्यक्रमों को नवीन संदर्भ तथा तीक्ष्णता प्रदान करेगी।

– बी संजय

सरकारी, निजी अनुदानित तथा निजी गैर–अनुदानित विद्यालयों के अध्यापकों की भूमिका–द्वन्द्व की समस्या का अध्ययन

– भरत टाक

प्रस्तावना

यह सर्वविदित है कि शिक्षा प्राप्त करके ही व्यक्ति अपने समाज के साथ उचित सामंजस्य स्थापित कर सकता है तथा अर्थोपार्जन के योग्य बनकर अपनी एवं राष्ट्र की प्रगति तथा विकास में सहायक बन सकता है। विद्यालय में बालकों को शिक्षा प्रदान करने का कार्य शिक्षक द्वारा किया जाता है। स्पष्ट है शैक्षणिक प्रक्रिया में शिक्षक की अत्यंत महत्वपूर्ण एवं केन्द्रीय भूमिका होती है। अध्यापक ही नेताओं, वैज्ञानिकों, दार्शनिकों, कानूनविदों एवं प्रशासकों का सृजनकर्ता माना जाता है। अध्यापक नवीन पीढ़ी का निर्माता, शिक्षा–व्यवसाय की धुरी और विद्यालय का प्राण होता है।

बालकों को वांछित एवं समग्र शिक्षा प्रदान करने हेतु एक ऐसे शिक्षक की आवश्यकता होती है, जो न केवल अपने विषय का ही समग्र ज्ञान रखता हो बल्कि बाल–मनोविज्ञान से भी भली–भांति परिचित हो। अध्यापक ऐसा तभी कर सकता है जब वह स्वयं एक प्रभावशाली तथा समायोजित व्यक्तित्व रखता हो। आज अधिकतर विद्यालयों में शिक्षक ठीक ढंग से समायोजित नहीं हैं। इसका मुख्य कारण यह है कि शिक्षण व्यवसाय का कार्य करते हुए उनपर निरन्तर व्यावसायिक दबाव बना रहता है तथा धीरे–धीरे वे भूमिका–द्वन्द्व की विकट समस्या का शिकार हो जाते हैं। लूथन्स के अनुसार किसी कृत्य या व्यवसाय की भूमिका–अपेक्षाएँ (ऑकूपेशनल एक्सपेक्टेशन्स) यदि वस्तुस्थिति से भिन्न होती है तो कार्यकर्ता भूमिका–द्वन्द्व (रोल कॉनफ्लिक्ट) की स्थिति में आ जाता है क्योंकि वह कृत्य संबंधी एक अपेक्षा की पूर्ति दूसरी को त्यागे बिना नहीं कर सकता। आरगिस के अनुसार भूमिका–द्वन्द्व तब अस्तित्व में आता है जब एक व्यक्ति :

अ) किन्हीं दो समान चाहत वाले कार्यों को करना चाहता है, लेकिन कर केवल एक ही सकता है।

ब) के समक्ष ऐसी चुनाव की स्थिति आती है जहां विवश होकर उसे अनचाहे कार्यों को करना पड़ता है।

स) के समक्ष ऐसा चुनाव आता है जब उसे मनपसन्द कार्य करना होता है लेकिन उसके करने में हानि अथवा दण्ड की संभावना होती है।

संयुक्त राज्य अमेरिका एवं ग्रेट ब्रिटेन के नवीनतम शोधों एवं रिपोर्टों से विदित होता है कि

विद्यालय के प्राचार्य, अभिभावक, विद्यार्थी एवं अन्य प्रभुत्वशाली व्यक्ति अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु अध्यापक पर, दबाव डालना आवश्यक मानते हैं। शिक्षक उस स्थिति में स्वयं को बहुत असुविधाजनक महसूस करता है, जबकि उसको विरोधाभासी आकांक्षाओं का सामना करना पड़ता है। समाज, अभिभावक, प्रबंधकर्ता सभी शिक्षकों से बड़ी–बड़ी अपेक्षाएं करते हैं। बालकों के विफल होने पर उसको ही दोषी मानते हैं जबकि शिक्षक स्वयं प्रतिकूल वातावरण का शिकार होता है। विद्यालय के प्राचार्य एवं अन्य अधिकारी शिक्षकों से अक्सर शिक्षण व्यवसाय से हटकर अन्य प्रकार के (विशेषकर व्यक्तिगत) कार्यों को सम्पन्न करने की अपेक्षा रखते हैं। आज–कल निजी विद्यालयों में शिक्षक को अपर्याप्त वेतन व नौकरी की असुरक्षा, पदोन्नति का अभाव जैसी स्थितियों का सामना करना पड़ रहा है वहीं सरकारी विद्यालयों में उन पर जनगणना, पशुगणना, टीकारण आदि कार्यों को करने का भार थोप दिया जाता है। परिणामस्वरूप अध्यापक शिक्षण की अपनी भूमिका के साथ न्याय नहीं कर पाते हैं एवं उनके समक्ष भूमिका–द्वन्द्व (रोल कॉनफ्लिक्ट) की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। कई बार तो इसके कारण शिक्षक कार्य को छोड़ने पर भी मजबूर हो जाते हैं। अध्यापकों से संबंधित यह एक तेजी से बढ़ती हुई विकट समस्या है। अतः इसके अध्ययन की नितान्त आवश्यकता है।

प्रसाद, पी(1985), ने अपने शोध परिणाम में पाया कि प्राथमिक एवं माध्यमिक स्तर के विद्यालयों में उच्च भूमिका–द्वन्द्व प्रभावित पुरूष एवं महिला शिक्षकों का कार्य निष्पादन निम्नस्तरीय है। गुप्ता, डॉ.एस.पी. (1993) के अध्ययन से यह निष्कर्ष प्राप्त हुआ कि पुरूष अध्यापक, महिला अध्यापिकाओं की तुलना में उच्च भूमिका–द्वन्द्व से पीड़ित थे। चिंग, किंग, साई (1994) ने ताईपाई (चीन) के प्राथमिक विद्यालय के अध्यापकों की भूमिका–द्वन्द्व का अध्ययन करने पर पाया कि अविवाहित पुरूष अध्यापकों में विवाहित महिला अध्यापिकाओं की तुलना में भूमिका–द्वन्द्व अधिक है। तीस वर्ष से कम आयु वाले शिक्षकों में भूमिका–द्वन्द्व अधिक पाया गया।

उपर्युक्त अनुसंधान कार्यों एवं अन्य अध्ययनों के अवलोकन से अनुसंधानकर्त्ता ने देखा कि चाहे सरकारी विद्यालय के अध्यापक हों या निजी अनुदानित या निजी गैर–अनुदानित विद्यालयों के शिक्षक हों (विशेषकर महिला शिक्षकों में) उनमें भूमिका–द्वन्द्व तेजी से बढ़ रहा है। इससे उनमें अक्सर तनाव, अवसाद, कुण्ठा, चिड़चिड़ापन, अनिद्रा आदि व्याधियां उत्पन्न हो जाती हैं जिससे उनका समायोजन एवं क्षमता प्रभावित होती है।

यह अवलोकन किया गया कि सरकारी विद्यालयों की अपेक्षा निजी एवं निजी गैर–अनुदानित विद्यालयों में प्रबंधकीय नियमों का पालन अपेक्षाकृत अधिक कठोरता से किया जाता है, जिससे अनुशासन की समस्या तो निम्न रहती है लेकिन वहां के अध्यापकों को वेतन अपेक्षाकृत कम मिलता है तथा प्रधानाध्यापक, प्रशासन व प्रबंधकीय अधिकारी आदि उनके कार्य में अनावश्यक दखल देते रहते हैं। इससे अध्यापकों में भूमिका–द्वन्द्व की स्थिति उत्पन्न हो जाती है, उनकी शिक्षण दक्षता प्रभावित होती है, जिसके अनेक दुष्परिणाम बालकों को भुगतने पड़ते हैं।

अतः शोधकर्त्ता यह महसूस करता है कि ऐसा शिक्षक जिसका मानस असंतुष्ट एवं कुण्ठित हो,

वह शिक्षण संबंधी आदर्श कार्य के उत्तरदायित्व को सही व सम्पूर्ण ढंग से नहीं निभा सकता। अतः यह जानना परम आवश्यक हो जाता है कि सरकारी, निजी अनुदानित एवं निजी गैर–अनुदानित विद्यालयों में अध्यापकों की भूमिका–द्वन्द्व का स्तर एवं स्वरूप कैसा है? यह भी जानने का प्रयास किया जाना चाहिए कि तीनों प्रकार के विद्यालयों में अध्यापकों के भूमिका–द्वन्द्व में क्या सार्थक अंतर है? इन्हीं उद्देश्यों एवं विचारों से प्रेरित होकर यह शोधकार्य सम्पन्न किया गया है।

शोध अध्ययन के प्रमुख उद्देश्य

शोधकर्त्ता ने अध्ययन के संदर्भ में कुछ विशिष्ट उद्देश्य निर्धारित किए हैं जो निम्नांकित हैं :

1. सरकारी, निजी अनुदानित एवं निजी–गैर अनुदानित विद्यालयों के अध्यापकों (पुरूष एवं महिला सम्मिलित) की भूमिका–द्वन्द्व का तुलनात्मक अध्ययन करना।
2. सरकारी, निजी अनुदानित एवं निजी गैर–अनुदानित विद्यालयों के पुरूष अध्यापकों की भूमिका–द्वन्द्व का तुलनात्मक अध्ययन करना।
3. सरकारी, निजी अनुदानित एवं निजी गैर–अनुदानित विद्यालयों की महिला अध्यापिकाओं की भूमिका–द्वन्द्व का तुलनात्मक अध्ययन करना।

शोध अध्ययन की परिकल्पनाएं

शोधकार्य को सुनिश्चित एवं सुव्यवस्थित ढंग से सम्पादित करने हेतु शोधकर्त्ता ने निम्नलिखित परिकल्पनाओं की संरचना की :

1. सरकारी, निजी अनुदानित एवं निजी गैर–अनुदानित विद्यालयों के अध्यापकों (पुरूष एवं महिला सम्मिलित) की भूमिका–द्वन्द्व में कोई सार्थक अंतर नहीं होगा।
2. सरकारी, निजी अनुदानित एवं निजी गैर अनुदानित विद्यालयों के पुरूष अध्यापकों की भूमिका–द्वन्द्व में कोई सार्थक अंतर नहीं होगा।
3. सरकारी, निजी अनुदानित एवं निजी गैर–अनुदानित विद्यालयों की महिला अध्यापिकाओं की भूमिका–द्वन्द्व में कोई सार्थक अंतर नहीं होगा।

शोध अध्ययन का न्यादर्श

प्रस्तुत शोधकार्य के लिए जोधपुर जिले के सरकारी, निजी अनुदानित एवं निजी गैर–अनुदानित, इन तीनों प्रकार के कुल 60 विद्यालयों में से कुल 450 अध्यापकों का चयन किया गया। प्रत्येक प्रकार के विद्यालय के अंतर्गत 75 पुरूष एवं 75 महिला अध्यापिकाओं का चयन किया गया। न्यादर्श का चयन यादृच्छिक विधि द्वारा किया गया जिसका विवरण निम्नलिखित है :

क्र.सं.	विद्यालय	प्रकार सम्मिलित किए गए शिक्षक		योग
		पुरूष	महिला	
1.	सरकारी विद्यालय	75	75	150
2.	निजी अनुदानित विद्यालय	75	75	150
3.	निजी गैर अनुदानित विद्यालय	75	75	150
	कुल योग	225	225	450

शोध अध्ययन की सीमाएं

प्रस्तुत शोध अध्ययन की निम्नलिखित परिसीमाएं हैं :

1. यह शोधकार्य जोधपुर जिले तक सीमित है।
2. प्रस्तुत शोध अध्ययन में केवल सरकारी, निजी अनुदानित एवं निजी–गैर अनुदानित इन तीन प्रकार के विद्यालयों को ही सम्मिलित किया गया है।
3. प्रस्तुत अध्ययन में केवल सीनियर सैकेण्डरी विद्यालय के शिक्षकों को ही न्यादर्श के रूप में सम्मिलित किया गया है।

शोध अध्ययन में प्रयुक्त विधि :

प्रस्तुत अध्ययन में सर्वेक्षण विधि को अपनाया गया है :

शोध अध्ययन में प्रयुक्त उपकरण

अ) अध्यापक भूमिका–द्वन्द्व सूची (TRC) : यह परीक्षण डॉ. प्रमीला प्रसाद एवं एल.आई. भूषण द्वारा निर्मित एक प्रमापीकृत उपकरण है तथा इसका प्रयोग अध्यापकों की भूमिका–द्वन्द्व के मापन हेतु किया जाता है। इसमें कुल 22 कथन हैं। प्रत्येक कथन के लिए पांच सम्भावित उत्तरों में से एक ही उत्तर देना है – यथा – बहुत अधिक, अधिक, कह नहीं सकता, नहीं तथा बिल्कुल नहीं।

अध्ययन में प्रयुक्त सांख्यिकी प्रक्रिया :

प्रस्तुत शोध अध्ययन में प्राप्त आंकड़ों एवं तथ्यों के विश्लेषण हेतु मध्यमान, प्रमाप विचलन एवं टी–परीक्षण जैसी सांख्यिकी प्रविधियों का प्रयोग किया गया है।

आंकड़ों का विश्लेषण एवं विवेचना

तालिका–1

जोधपुर जिले के सरकारी, निजी अनुदानित एवं निजी गैर–अनुदानित विद्यालयों के अध्यापकों (पुरूष एवं महिला सम्मिलित) की भूमिका–द्वन्द्व का तुलनात्मक अध्ययन

श्रेणी / समूह	न्यादर्श	मध्यमान	प्रमाप विचलन	टी मान	सार्थकता
सरकारी विद्यालय के अध्यापक	150	27.22	9.35		असार्थक
निजी अनुदानित विद्यालय के अध्यापक	150	25.82	8.91	1.33	.01 विश्वास स्तर पर
सरकारी विद्यालय के अध्यापक	150	27.22	9.3		असार्थक.
निजी गैर–अनुदानित विद्यालय के अध्यापक	150	25.68	55.63	1.73	01 विश्वास स्तर पर
निजी अनुदानित विद्यालय के अध्यापक	150	25.82	8.91		असार्थक
निजी गैर–अनुदानित विद्यालय के अध्यापक	150	25.68	5.63	0.16	.01 विश्वास स्तर पर

उपर्युक्त तथ्यों के अनुसार जोधपुर जिले के सैकेण्डरी सरकारी, निजी अनुदानित एवं निजी गैर–अनुदानित विद्यालय के अध्यापकों की भूमिका–द्वन्द्व का मध्यमान यह प्रकट करता है कि तीनों ही प्रकार के विद्यालयों के अध्यापक भूमिका–द्वन्द्व से प्रभावित हैं तथा उनका भूमिका–द्वन्द्व निम्नस्तरीय है। इन विद्यालयों के अध्यापकों के तीनों समूहों की तुलना करने पर यह पाया गया कि भूमिका–द्वन्द्व पर मध्यमान के अंतर का टी मान, 0.01 विश्वास स्तर के मूल्य 2.60 से कम है। अतः यह कहा जा सकता है कि तीनों समूहों के मध्यमानों में सार्थक अंतर नहीं है।

अभिप्राय यह है कि सरकारी, निजी अनुदानित एवं निजी गैर–अनुदानित विद्यालय के अध्यापकों में भूमिका–द्वन्द्व में अंतर नहीं है।

तालिका–2

जोधपुर जिले के सरकारी, निजी अनुदानित एवं निजी गैर–अनुदानित विद्यालयों के पुरूष अध्यापकों की भूमिका–द्वन्द्व का तुलनात्मक अध्ययन

श्रेणी / समूह	न्यादर्श	मध्यमान	प्रमाप विचलन	टी मान	सार्थकता
सरकारी विद्यालय के पुरूष अध्यापक	75	26.16	7.15	0.70	असार्थक .01 विश्वास स्तर पर
निजी अनुदानित विद्यालय के पुरूष अध्यापक	75	27.13	9.69		
सरकारी विद्यालय के पुरूष अध्यापक	75	26.16	7.15	0.13	असार्थक 01 विश्वास स्तर पर
निजी गैर–अनुदानित विद्यालय के पुरूष अध्यापक	75	26.00	6.16		
निजी अनुदानित विद्यालय के पुरूष अध्यापक	75	27.13	9.69	0.86	असार्थक .01 विश्वास स्तर पर
निजी गैर–अनुदानित विद्यालय के पुरूष अध्यापक	75	26.00	6.16		

तालिका 2 को देखने पर यह ज्ञात होता है कि सरकारी, निजी अनुदानित एवं निजी गैर अनुदानित विद्यालय के पुरूष अध्यापकों की भूमिका–द्वन्द्व का मध्यमान निम्न श्रेणी को प्रकट करता है अर्थात् तीनों विद्यालयों के पुरूष अध्यापकों में निम्न भूमिका–द्वन्द्व का प्रभाव है। इन तीनों विद्यालयों के अध्यापकों के तीनों समूहों के तुलनात्मक अध्ययन में क्रांतिक अनुपात (टी मान) का अवलोकन करने पर यह पाया गया कि यह 0.01 सार्थकता स्तर 2.62 से कम है। अतः यह कहा जा सकता है कि सरकारी, निजी अनुदानित एवं निजी गैर–अनुदानित विद्यालय के पुरूष अध्यापकों की भूमिका द्वन्द्व में कोई सार्थक अंतर नहीं है।

तालिका – 3

जोधपुर जिले के सरकारी, निजी अनुदानित एवं निजी गैर–अनुदानित विद्यालयों की महिला अध्यापिकाओं की भूमिका–द्वन्द्व का तुलनात्मक अध्ययन

श्रेणी/समूह	न्यादर्श	मध्यमान	प्रमाप विचलन	टी मान	सार्थकता
सरकारी विद्यालय की महिला अध्यापिका	75	27.88	10.59	2.21	असार्थक .01 विश्वास स्तर पर
निजी अनुदानित विद्यालय की महिला अध्यापिका	75	24.52	7.84		
सरकारी विद्यालय की महिला अध्यापिका	75	27.88	10.59	1.87	असार्थक .01 विश्वास स्तर पर
निजी गैर–अनुदानित विद्यालय की महिला अध्यापिका	75	25.36	5.03		
निजी अनुदानित विद्यालय की महिला अध्यापिका	75	24.52	7.84	0.78	असार्थक .01 विश्वास स्तर पर
निजी गैर–अनुदानित विद्यालय की महिला अध्यापिका	75	25.36	5.03		

तालिका 3 यह दर्शाती है कि जोधपुर जिले के सीनियर सैकेण्डरी सरकारी, निजी अनुदानित एवं निजी गैर–अनुदानित विद्यालयों की महिला अध्यापिकाएँ भी निम्न भूमिका–द्वन्द्व से पीड़ित हैं।

तीनों श्रेणी/समूहों का टी.मान 0.01 विश्वास स्तर पर असार्थक है। अभिप्राय यह है कि तीनों प्रकार के विद्यालयों की महिला अध्यापिकाओं की भूमिका–द्वन्द्व के स्तर में कोई सार्थक अंतर नहीं है।

शोध अध्ययन के निष्कर्ष एवं शैक्षिक उपयोगिता

प्रस्तुत शोध अध्ययन के मुख्य निष्कर्ष इस प्रकार हैं :

1. जोधपुर जिले के सरकारी, निजी अनुदानित एवं निजी गैर–अनुदानित सीनियर सैकेण्डरी

विद्यालयों में कार्यरत समस्त अध्यापकों (पुरूष एवं महिला सहित) की भूमिका–द्वन्द्व की गणना करने पर यह ज्ञात होता है कि सभी अध्यापक निम्न भूमिका–द्वन्द्व से ग्रसित हैं।

2. जोधपुर जिले के सरकारी, निजी अनुदानित एवं निजी गैर अनुदानित विद्यालयों के पुरूष एवं महिला अध्यापिकाओं की भूमिका–द्वन्द्व के आंकड़ों का विश्लेषण करने पर पाया गया कि तीनों प्रकार के विद्यालय के पुरूष एवं महिला अध्यापक निम्न भूमिका–द्वन्द्व महसूस करते हैं।
3. शोध अध्ययन की परिकल्पना संख्या 1 से संबंधित आंकड़ों का विश्लेषण एवं तुलना करने पर यह स्पष्ट होता है कि जोधपुर जिले के सरकारी, निजी अनुदानित एवं निजी गैर अनुदानित विद्यालय के समस्त अध्यापकों (पुरूष एवं महिला सहित) की भूमिका–द्वन्द्व पर प्राप्त मध्यमानों में सार्थक अंतर नहीं है। अतः यह कहा जा सकता है कि तीनों प्रकार के विद्यालयों के अध्यापकों की भूमिका–द्वन्द्व में कोई अंतर नहीं है। इस प्रकार परिकल्पना संख्या 1 स्वीकृत की जाती है।
4. शोध अध्ययन की परिकल्पना संख्या 2 एवं 3 से संबंधित तालिका 2 एवं 3 के आंकड़ों का विश्लेषण एवं तुलना करने पर यह ज्ञात होता है कि जोधपुर के सरकारी, निजी अनुदानित एवं निजी गैर अनुदानित विद्यालय के पुरूष एवं महिला अध्यापकों की भूमिका–द्वन्द्व में कोई सार्थक अंतर नहीं है। अतः परिकल्पना संख्या 2 एवं 3 स्वीकृत की जाती है।
5. विद्यालयों में प्रभावी शिक्षण की उपलब्धि तभी प्राप्त हो सकती है जब हम अध्यापकों में, भूमिका–द्वन्द्व को कम कर सकें क्योंकि भूमिका–द्वन्द्व उनके जीवन के सभी पक्षों यथा व्यक्तिगत, सामाजिक एवं व्यावसायिक को अत्यधिक प्रभावित करता है।
6. शैक्षिक नीति–निर्माताओं, योजनाकर्ताओं एवं चयन समितियों को शिक्षकों की नौकरी/सेवा संबंधी परिस्थितियों को गहनता से देखना एवं अवलोकन करना चाहिए तथा भूमिका–द्वन्द्व को कम करने हेतु आवश्यक कदम उठाने चाहिए।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. अग्रवाल, जे.सी. (1995) 'एसेन्शीयलस् ऑफ एजूकेशनल साइकोलॉजी' विकास पब्लिशिंग हाउस प्रा.लि., दिल्ली।
2. अग्रवाल, वाई.पी. (1988) 'स्टेटीस्टिक्स, मैथड्स, कन्सेप्ट्स, एपलीकेशन एण्ड कम्प्यूटेशन', स्टर्लिंग पब्लिकेशन, न्यू दिल्ली।
3. साई, किंग–चिंग (1994) 'ए स्टडी ऑफ रोल कॉनफ्लिक्ट बीटवीन टीचर्स एण्ड पार्ट टाइम एडमीनिसट्रेटर्स एट एलीमेन्ट्री स्कूलस' जरनल ऑफ एजूकेशन एण्ड साईकोलोजी' वोल्यूम 17, पी.पी. 361–390।
4. गुप्ता, डॉ.एस.पी. (1993) 'रोल कॉनफ्लिक्ट अमंग टीचर्स एण्ड सम बायोग्राफिकल वेरीयेबल्स' जरनल ऑफ इण्डियन एजूकेशन, मार्च।
5. मेहता, जी.एल. (1985) 'ए स्टडी ऑफ रोल कॉनफ्लिक्टस् ऑफ टीचर्स' साईटेड इन बुच एम.बी. (संपादित) फोर्थ सर्वे ऑफ रिसर्च इन एजूकेशन, एन.सी.ई.आर.टी., नई दिल्ली।
6. प्रसाद पी. (1985) 'एसपाईरेशन्स, एडजस्टमैन्ट्स एण्ड रोल कॉनफ्लिक्ट्स इन प्राइमरी एण्ड सैकेण्डरी स्कूल टीचर्स', पी.एच.डी., भागलपुर विश्वविद्यालय।

अनुसूचित जनजातियों में वंचना और विकास – एक विश्लेषण

एच.सी. जैन एवं कृष्ण कुमार शुक्ला

प्रस्तावना

भारत में अफ्रीका महाद्वीप के बाद सर्वाधिक जनजातीय समुदाय बसते हैं जिनकी आबादी कुल जनसंख्या का लगभग 8.19 प्रतिशत है। संविधान के अनुसार भारत के विभिन्न राज्यों और संघ शासित क्षेत्रों में 533 जनजातीय अनुसूचित समुदाय हैं। सदियों से अलग–थलग इन समुदायों को देश की स्वतंत्रता के बाद ही राष्ट्रीय विकास की मुख्य धारा से जोड़ने के प्रयास किये गये। लेकिन शिक्षा, स्वास्थ्य, पोषण, आवास, संचार एवं यातायात की सुविधाओं से जनजातीय समुदायों का एक बड़ा भाग आज भी वंचित है। देश की विकास परियोजनाओं से लाभान्वित होने के बजाय ये उसके वंचना का शिकार हो गये। उत्खनन, बड़े बांधों के निर्माण, संचार एवं यातायात में विस्तार आदि के कारण जनजातीय समुदायों का बड़ा भाग भूमि वंचना का शिकार हुआ है। उससे ना केवल उनकी आर्थिक स्थिति कमजोर हुई है बल्कि वे अपनी सामाजिक–सांस्कृतिक पहचान से भी वंचित हो गये हैं।

वस्तुतः जनजातीय समुदायों के जीवन में वन क्षेत्र, पहाड़ों तथा दुर्गम स्थलों में निवास के कारण वंचना का विस्तार तो हुआ ही है सभ्य समाज के सम्पर्क में आने से यह वंचना और बढ़ी है। स्पष्ट है कि जनजातीय समुदायों में वंचना एक बहु आयामी समस्या है जिसका सम्यक विश्लेषण आवश्यक है।

जनसंख्या प्रस्थिति

भारत में अनुसूचित जनजातियों की वंचना और विकास की प्रस्थिति का विश्लेषण करने के पूर्व उनकी जनसंख्या प्रस्थिति को जानना समीचीन होगा। सन् 1991 एवं 2001 की जनगणना रिपोर्ट के आधार पर भारत में अनुसूचित जनजातियों के जनसंख्यात्मक पक्ष निम्नवत हैं।

तालिका क्रं. 1 – भारत में अनुसूचित जनजाति जनसंख्या

क्र.	चयनित पक्ष	1991	2001
1.	भारत में अनु. जनजातीय आबादी	67758389	84326240
2.	कुल आबादी में अनुसूचित जनजातीय आबादी का प्रतिशत	8.08	8.19

3.	अनुसूचित जनजातीय आबादी में पुरूष प्रतिशत	50.71	50.56
4.	अनुसूचित जनजातीय आबादी में महिला प्रतिशत	49.29	49.44
5.	अनुसूचित जनजातीय आबादी में ग्रामीण प्रतिशत	92.6	84.23
6.	अनुसूचित जनजातीय जनसंख्या में नगरी प्रतिशत	7.4	5.77

स्त्रोत : भारत जनगणना 1991 एवं 2001

देश के प्रमुख राज्यों में साक्षरता की स्थिति एक सी नहीं है। कुछ राज्यों को छोड़कर अधिकांश राज्यों में साक्षरता वंचना की स्थिति निम्नांकित है –

तालिका–2 राज्यवार साक्षरता दर और अनुसूचित जनजातियों में साक्षरता वंचना

क्र.	राज्य / संघ	महिला				पुरूष			
		1991		2001		1991		2001	
		साक्षरता	वंचना	साक्षरता	वंचना	साक्षरता	वंचना	साक्षरता	वंचना
1	आंध्र प्रदेश	25.3	0.747	47.66	0.523	8.7	0.903	26.11	0.739
2	अरूणाचल प्रदेश	44	0.56	58.77	0.412	24.9	0.751	40.56	0.594
3	असम	58.9	0.411	72.34	0.277	39	0.610	52.40	0.476
4	बिहार	38.4	0.616	39.76	0.602	14.8	0.852	15.54	0.845
5	छत्तीसगढ़	–	0	65.04	0.350	–	0	39.35	0.607
6	गोवा	54.4	0.456	63.49	0.365	29	0.710	47.32	0.527
7	गुजरात	48.2	0.518	59.18	0.408	24.2	0.758	36.02	0.640
8	हिमाचल प्रदेश	62.7	0.373	77.71	0.223	31.2	0.688	53.32	0.467
9	जम्मू एवं कश्मीर	–	0	48.16	0.518	–	0.000	25.51	0.745
10	झारखंड	–	0	53.98	0.460	–	0.000	27.21	0.728
11	कर्नाटक	47.9	0.521	59.66	0.403	23.6	0.764	36.57	0.634
12	केरल	63.4	0.366	70.78	0.292	51.1	0.489	58.11	0.419
13	मध्य प्रदेश	32.2	0.676	53.55	0.465	10.7	0.893	28.44	0.716

14	महाराष्ट्र	49.1	0.509	67.02	0.330	24	0.760	43.08	0.569
15	मणिपुर	62.4	0.376	73.16	0.268	44.5	0.555	58.42	0.416
16	मेघालय	49.85	0.502	63.49	0.365	43.6	0.564	59.2	0.408
17	मिजोरम	86.7	0.113	91.71	0.083	78.7	0.213	86.95	0.131
18	नागालैंड	66.3	0.337	70.26	0.297	54.5	0.455	61.35	0.387
19	उड़ीसा	34.4	0.656	51.48	0.485	10.2	0.898	23.37	0.766
20	राजस्थान	33.3	0.667	62.1	0.379	4.4	0.956	26.16	0.738
21	सिक्कम	66.8	0.332	73.81	0.262	50.4	0.496	60.16	0.398
22	तमिलनाडु	35.3	0.647	50.15	0.499	20.2	0.798	32.78	0.672
23	त्रिपुरा	52.9	0.471	67.97	0.320	27.3	0.727	44.6	0.554
24	उत्तर प्रदेश	49.9	0.501	48.45	0.516	19.9	0.801	20.7	0.793
25	उत्तराखंड	–	0	76.39	0.236	–	0	49.37	0.506
26	पश्चिम बंगाल	40.1	0.599	57.38	0.426	15	0.850	29.15	0.709
27	अंडमान निकोवार द्वीप	64.2	0.358	73.61	0.264	48.7	0.513	59.58	0.404
28	दादर और नगर हवेली	40.7	0.593	55.97	0.440	15.9	0.841	26.99	0.730
29	दमन और द्वीप	63.6	0.364	74.23	0.258	41.5	0.585	51.93	0.481
30	लक्ष्यद्वीप	89.5	0.105	92.16	0.078	71.7	0.283	80.18	0.198
	भारत	40.65	0.593	59.17	0.408	18.19	0.818	34.76	0.652

स्त्रोत : सी.एम. लक्ष्मन (2009) इण्डियन जर्नल ऑफ एडल्ट, एजुकेशन वाल्यु. 70 (3) पृ. 33–34

उक्त तालिका से सपष्ट है कि विगत दशक में (1991–2001) जहां लैंगिक अनुपात में सुधार हुआ वहीं नगरी जनसंख्या में दुगनी वृद्धि हुई। इसके मुख्य कारणों में आदिवासियों का नगरों की ओर पलायन भी है।

शिक्षा साक्षरता वंचना

शिक्षा साक्षरता किसी भी समुदाय के सशक्तीकरण का एक सशक्त माध्यम रहा है। देश की स्वतंत्रता के बाद कमजोर वर्गों में व्याप्त असाक्षरता को देखते हुए भारत के संविधान के अनुच्छेद

275 में शिक्षा साक्षरता का विशेष प्रावधान किया गया। बावजूद इसके अनुसूचित जनजातियों में साक्षरता वंचना (Literacy Deprivation) की समस्या सदैव बनी रही। भारत में सामान्य जनसंख्या की तुलना में अनुसूचित जनजातियों में साक्षरता दर की स्थिति निम्नवत पायी गई।

तालिका–3 सामान्य एवं अनुसूचित जातियों में साक्षरता दर (प्रतिशत)

वर्ष	सामान्य जनसंख्या में साक्षरता दर प्रतिशत	अनु. जनजातियों में साक्षरता दर प्रतिशत	साक्षरता दर में अन्तर प्रतिशत
1971	33.8	11.3	22.5
1981	41.3	16.35	24.95
1991	52.2	29.60	22.60
2001	65.38	47.1	18.28

स्त्रोत : इण्डियन जरनल ऑफ एडल्ट एजुकेशन वाल्यु. 70 (3) पृ. 32

उक्त तालिका से स्पष्ट है कि 1971 में सामान्य और अनु. जनजातीय जनसंख्या के साक्षरता दर में 22.56 प्रतिशत का अन्तर था जो 2001 में घटकर 18.28 प्रतिशत हो गया। इन तीन दशकों में यह अन्तर मात्र 4.22 प्रतिशत ही कम हुआ जो उनमें व्याप्त साक्षरता वंचना को व्यक्त करता है।

विस्थापन एवं भू–वंचना

जनजातीय क्षेत्रों में उत्खनन, औद्योगिक विकास और अन्य विकास परियोजनाओं एवं कार्यों का प्रभाव जनजातीय विस्थापन और भू–वंचना (Land Deprivation) के रूप में परिलक्षित हुआ। इससे उनका न केवल आर्थिक जीवन प्रभावित हुआ बल्कि उनकी सामाजिक सांस्कृतिक पहचान भी खत्म हो गई। वे अपने ही देश में शरणार्थी बन गये। विश्वभर में देशज लोगों को उनकी भूमि से बेदखल किया जा रहा है। भारत इसका अपवाद नहीं है।

मुखोपाध्याय (2008) द्वारा अपने शोधपत्र में बड़े बांधों के निर्माण से उत्पन्न विस्थापन की समस्या का अध्ययन किया गया। बड़े बांधों के निर्माण से लाखों व्यक्ति तथा परिवार विस्थापित हुए जिनमें से एक–चौथाई जनसंख्या जनजातीय पायी गई। विस्थापन के कारण जनजातीय लोगों को जिन समस्याओं को भोगना पड़ा है उनमें प्राकृतिक संसाधनों से वंचना, भूमि से अलगांव, सामुदायिक विघटन, जीविका से वंचना, सांस्कृतिक विखंडन और महिलाओं के प्रति हिंसा और शोषण आदि मुख्य हैं।

प्राकृतिक संसाधनों से वंचना

सदियों से जनजातीय समुदाय अपनी जीविकोपार्जन हेतु प्राकृतिक संसाधनों पर निर्भर रहे हैं। पर्यावरण से जो सामग्री और सेवायें प्राप्त होती है वे सब प्राकृतिक संसाधन है। प्राकृतवासों के विनाश से वन्य जीवन विनाश के कगार पर है। वनों, जलाशयों एवं भूमि जैसे संसाधनों का दोहन अब केवल आदिवासियों की बपौती नहीं रही है। ये सभी संसाधन सरकारी नियंत्रण में होने से इनका उपयोग आदिम समुदायों तक ही सीमित नहीं रहा है। वन एवं वनोपज संग्रह, आखेट एवं झुम की खेती, पशुपालन एवं आस पास के गांवों में मेहनत मजदूरी से जनजातीय समुदाय अपना भरण–पोषण करता आया है। वस्तुतः जल, जंगल, जमीन और जानवर आदि प्राकृतिक संसाधन हैं लेकिन वनों के कटने एवं उन पर सरकारी स्वामित्व होने से जनजातियो उपरोक्त संसाधनों से वंचना का शिकार हुई हैं।

सामाजिक – सांस्कृतिक वंचना

लम्बे समय तक दुर्गम स्थानों में निवास होने के कारण जनजातीय समुदाय राष्ट्र की मुख्य धारा से अलग–थलग पड़ गये। लेकिन देश की स्वतंत्रता के बाद के दशकों में जो विकास कार्य सम्पन्न हुए उससे वे सभ्य लोगों के संसार के सम्पर्क में आये। फलतः जहां एक ओर वे अपनी जड़ों से उखड़े वहीं दूसरी ओर वृहद समाज की मूल्यव्यवस्था को भी पूरी तरह आत्मसात नहीं कर सके। इसके अलावा धर्मान्तरण एवं औद्योगीकरण के प्रभावों से भी वे अछूते नहीं रहे। फलतः उनके जीवन में मूल्य दुबिधा (Value Dilemma) की स्थिति खड़ी हो गयी।

जनजातीय विकास

देश की स्वतंत्रता के बाद भारत के संविधान में अनुसूचित जातियों, जनजातियों एवं महिलाओं सहित समाज के अन्य पिछड़े वर्गों के लिये विशेष प्रावधान किये गये। जनजातीय उपयोगिता के अंतर्गत विशेष आर्थिक पैकेज भी दिया गया लेकिन सरकार द्वारा प्रदत्त सुविधाओं का लाभ लेने में कई कारणों से जनजातीय लोग पीछे रहे। वस्तुतः वे विविध प्रकार की वंचनाओं के शिकार हुए। भारत सरकार द्वारा अनुसूचित जनजातियों एवं अन्य परम्परागत वनवासी (वन अधिकारों की मान्यता) अधिनियम 2006, 31 दिसम्बर 2007 को परित कर पूरे देश में लागू किया गया। इस अधिनियम के बारे में जनजातीय अधिकारी, कार्यकर्ताओं तथा पर्यावरणविदों के बीच विवाद चला लेकिन राज्य सरकारों द्वारा इस संदर्भ में वन अधिकारी कमेटियों का गठन कर इसके क्रियान्वयन को दिशा दी गयी। मध्यप्रदेश देश का ऐसा पहला राज्य है जहां न केवल सर्वप्रथम वन अधिकार अधिनियम को क्रियान्वित किया गया बल्कि इस संदर्भ में सर्वाधिक मामलों को भी निपटाया गया।

भारत में प्रदेशवार वन अधिनियम 2006 के अंतर्गत दर्ज मामलों का निपटारा निम्नवत पाया गया।

तालिका – 4 वन अधिकारों संबंधी मामलों का निपटारा दर

क्र.	राज्य	कुल मामले	अंतिम निर्णय	प्रतिशत
1	मध्यप्रदेश	366874	263427	71–80
2	त्रिपुरा	162186	81144	50–03
3	आन्ध्रप्रदेश	329233	137613	41–79
4	छत्तीसगढ़	4000000	109711	27–43
5	उड़ीसा	292812	36892	12–59
6	राजस्थान	53274	4913	9–28
7	गुजरात	168306	2575	1–52
8	महाराष्ट्र	245497	1384	0–56
9	पश्चिम बंगाल	138064	–	–
10	तमिलनाडु	7741	–	–
11	कर्नाटक	1412	–	–
12	झारखंड	4539	–	–
13	बिहार	495	–	–

स्त्रोत : द टाइम्स ऑफ इंडिया, नई दिल्ली, अगस्त 24, 2009

उल्लेखनीय तथ्य यह है कि असम, हिमाचल प्रदेश एवं उत्तराखंड में वन अधिकार कमेटियां गठित हुई हैं जबकि सिक्कम एवं अरूणाचल प्रदेश में इस संदर्भ में कोई कार्यवाही नहीं की गई है जहां जनजातीय आबादी पर्याप्त संख्या में मौजूद है।

निष्कर्ष एवं सुझाव

जनजातीय समुदायों में व्याप्त वंचना को दूर करने के लिये जो प्रयास किये गये वे पर्याप्त नहीं हैं। जनजातीय विकास के लिये आदिवासी बहुल क्षेत्रों में निम्नलिखित दिशाओं में सघन प्रयास करने की आवश्यकता है।

- जनजातीय समुदायों में सामान्य रूप से शिक्षा और साक्षरता की स्थिति में सुधार हेतु विशेष रूप से ध्यान देने की आवश्यकता है। महिला साक्षरता की दिशा में ठोस प्रयास करने की आवश्यकता है।

- विकास परियोजनाओं के कारण विस्थापित जनजातीय लोगों के पुनर्वास में व्याप्त कमियों, भ्रष्टाचार और शिथिलता को दूर किया जाए। प्रशासनिक ढांचे में कसाव लाया जाए।
- जनजातीय उपयोजना के अंतर्गत प्रदत्त राशि को बढ़ाया जाना चाहिये जिससे जनजातीय बहुल क्षेत्रों के विकास कार्यों को गति मिले।
- यद्यपि केन्द्र सरकार द्वारा वन अधिनियम 2006 पारित कर जनजातीय समुदायों को वन समान के दोहन हेतु कुछ अधिकार दिये गये हैं लेकिन अधिकांश प्रदेश में वन संपदा अधिकारों के हस्तान्तरण हेतु राज्यों द्वारा कमेटी ही गठित नहीं की गयी है।
- अनुसूचित जनजातियों की श्रेणी में आरक्षित पद बड़ी संख्या में रिक्त पड़े है जिन्हें भरने की प्रक्रिया शीघ्र पूर्ण हो ताकि इन वर्गों के लोगों को सेवा का लाभ मिल सके।

जनजातीय समुदायों को वंचना की इस स्थिति से उबारने तथा उन्हें विकास की मुख्यधारा से जोड़ने पर न केवल इनकी प्रस्थिति में सुधार होगा बल्कि नक्सलवाद जैसी गतिविधियों में भी कमी संभव हो सकेगी। आज नक्सलवाद की समस्या से देश के लगभग 250 जिले प्रभावित हैं जहां कानून और व्यवस्था की स्थिति काफी खराब है। जनजातियों का विकास ही देश को इस विनाश से बचा सकता है।

संदर्भ :

- गुप्त, विनोद (1987) "आदिवासी जन–शिक्षा", 'प्रौढ़ शिक्षा, वर्ष 30 अंक 10, जनवरी 1987, पृ. 19–21
- कनिघंम, विलियम पी. एवं सायगो, बारबरा बुडवर्थ (1995) इन्वायरानमेंटल साइंस, डब्ल्यू सी. बी. पब्लिशर्स डुबेक यू.एस.ए. पृ. 303–04
- जैन एस.सी. (2000) मध्य प्रदेश में प्रौढ़ शिक्षा मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल
- रजिस्ट्रार जनरल ऑफ इण्डिया, पापुलेशन सेन्सस अब्सट्रेक–2, 2001 नई दिल्ली
- जैन एस.सी. (2002) वानिकी विस्तार और प्रबंधन, नेशनल पब्लिशिंक हाउस, जयपुर, नई दिल्ली, पृ. 78–87
- मुखोपाध्याय सुनीत (2008) डिव्लपमेंट डिस्प्लेसमेंट, रिहैवलिटेशन एण्ड रिसैटलमैंट : लोकेटिंग ट्राइबल वूमैन, इण्डियन जर्नल ऑफ एडल्ट एजूकेशन, वाल्यु 69 (3), जुलाई सितम्बर 2008, पृ. 3–32
- राम, उमा (2009) "ट्राइबल आर्ट ऑफ लिविंग–सिंगिल एण्ड डान्सिंग" द टाइम्स ऑफ इण्डिया, नई दिल्ली, अप्रैल 18, 2009
- लक्ष्मण, सी. एम. (2009) "जेण्डर लिटरेसी एण्ड आस्पेक्टस ऑफ डेयरी वेशन अमंग इण्डियाज ट्राइब्स", इण्डियन जर्नल ऑफ एडल्ट एजूकेशन, वाल्यु 20, (3) जुलाई–सितम्बर 2009, पृ. 28–38

साक्षर भारत–शिक्षित भारत

साक्षर भारत,
शिक्षित भारत
माँ बहनों से हो विकसित भारत।

अक्षर–अक्षर दीप जले,
खेती –बाड़ी करते रहे
हँसिए–खुरपी साथ रहे।

मन में हर्ष–उल्लास रहे,
पढ़ने–लिखने की आस रहे।

राष्ट्रीय योजना का ज्ञान रहे,
कुरीतियों का भान रहे,
जीवन के प्रति मान रहे,
अक्षर मोती साथ रहे।

"ली" LEE कौशल–विकास रहे,
जिले में जन शिक्षण संस्थान रहे,
हुनर, दक्षता व स्वावलंबन से,
बेरोजगारी दूर रहे।

– संजय कुमार

शब्द ब्रह्म है

– ओम प्रकाश शर्मा

विश्व विख्यात धार्मिक ग्रन्थ पवित्र बाईबिल के प्रारम्भ में एक वाक्य है जिसके अनुसार "आदि में शब्द था, शब्द ही परमेश्वर हुआ"। इस वाक्य से यह सिद्ध होता है कि शब्द या अक्षर से जिसका परिचय है, वही परमात्मा का कृपा–पात्र है। भारतीय वैदिक काल के ऋषि–मुनियों–दार्शनिकों व चिन्तकों ने भी शब्द– ब्रह्म की आराधना से स्वयं को परमात्मा के अत्यन्त निकट उपस्थित पाया। इसी प्रकार विश्व विख्यात दार्शनिक ग्रन्थ श्री गीता में भगवान श्रीकृष्ण ने अर्जुन के समक्ष विभूति–योग नामक अध्याय में स्वयं को "अ" अक्षर के रूप में प्रस्तुत किया है। यहां तक कि स्वयं परमात्मा भी जब निराकार रूप धारण कर इस पृथ्वी पर साकार रूप से अवतार लेते हैं तब वह भी शब्द की प्राप्ति व परिचय के लिये विद्या अध्ययन की ओर अग्रसर हो, शब्द ब्रह्म की उपयोगिता को सिद्ध करते हुए, मानव–मात्र के लिए एक गूढ़ सन्देश देते हैं। यही शब्द की महानता है।

इस विश्व में अनेकों वीर–साहसी–त्यागी व सेवा भावी महापुरूषों ने अपनी उपस्थिति दर्ज कराई है। इनमें से जो महात्मा कबीर के समान निरक्षर थे, उन्हें भी अपनी निरक्षरता पर बहुत पश्चाताप था। श्री रामचरितमानस महाकाव्य में वन में रहने वाली आदिवासी वयोवृद्ध महिला की जीर्ण–शीर्ण कुटिया पर जब महाप्रभु श्रीराम, सीता अन्वेषणार्थ अपने अनुज श्रीलक्ष्मण सहित जाते हैं, तब प्रभु श्री राम से अपना परिचय देते हुए आदिवासी भील समाज की वयोवृद्ध महिला "शबरी" ग्लानि व पछतावे के साथ कहती है –

"अधम से अधम, अधम ते नारी। तिन्ह मैह मैं मतिमन्द गंवारी।।

शब्द ज्ञान से अपरिचित होने के कारण वह स्वयं को अधम मानने में भी लज्जा अनुभव नहीं करती, तथा अधमता के साथ साथ स्वयं को निरक्षरता के कारण "गंवारी" संज्ञा देने में भी पीछे नहीं रहती। आदि काल से जिस पावन भूमि पर "शब्द– ब्रह्म " की स्थापना व आराधना होती आई है वहां यदि कोई, कही भी, असाक्षर है तो वह स्वयं को धिक्कारने में पीछे नहीं रहता। श्रीरामचरित्रमानस महाकाव्य के अन्तिम सोपान में श्रीराम राज्य का वर्णन करते हुए आचार्य प्रवर महाकवि श्रीतुलसीदास जी ने स्पष्ट लिखा है "सब गुणग्य सब पडितज्ञानी" अर्थात प्रभु श्रीराम के राज्य में एक भी व्यक्ति निरक्षर या मूर्ख नहीं था। सभी गुणवान, साक्षर व ज्ञान के पात्र थे। एक राज्य में लोक मंगलकारी समाज की स्थापना के लिए यह महत्वपूर्ण सूत्र था। साक्षरता राम–राज्य की मजबूत नींव मानी गई है। श्री यशोदानन्दन यादवेन्द्र श्रीकृष्ण भी अपने अग्रज बलराम जी के साथ गोकुल ग्राम छोड़कर उज्जैन नगर में महर्षि सान्दीपनी की पाठशाला में अक्षर–ज्ञान प्राप्त करने के लिए स्वयं चलकर गये थे। अतः परमात्मा से भी हमें यह प्रेरणा मिलती है कि अक्षर ज्ञान की साधना करना अनिवार्य है। पौराणिक साहित्य के सिरमौर ग्रन्थ श्रीमद् भागवत–महापुराण में भक्त बालक श्री ध्रुव का विवरण है। अपनी विमाता के व्यंग्य वाणों से आहत बालक ध्रुव जब मधुबन में ईश्वर की तपस्या कर रहे थे तब परमात्मा से उनका प्रथम साक्षात्कार हुआ। परमात्मा से बालक–ध्रुव ने सबसे पहले यह वरदान मांगा कि मैं बालक हूं, मैं आपकी स्तुति–गान करना चाहता हूं, कृपया आप मुझे साक्षरता का पूरा ज्ञान प्रदान कर गौरवान्वित करने की कृपा करें। श्री शुकदेव परमहंसाचार्य ने पाण्डुनन्दन राजा परीक्षित को बताया कि बालक ध्रुव का साक्षरता के प्रति यह सम्मान देखकर परमात्मा ने अपना दिव्य आलौकिक व पावन शंख का स्पर्श बालक ध्रुव के कपोल से कराया, उसी क्षण बालक ध्रुव को साक्षरता–अक्षर ज्ञान व शब्द ब्रह्म का अलौकिक महाप्रसाद प्राप्त हुआ। उसी ज्ञान–उपलब्धि के पश्चात

ध्रुव ईश्वर का दिव्य स्तुति करने में समर्थ हुए।

श्रीमद् भागवत महापुराण में यह भी वर्णित है कि देवनागरी लिपि के स्वर व व्यंजनों की उत्पत्ति आदि प्रजापति देवता श्री ब्रह्माजी द्वारा हुई है। "अ" से लेकर "ह" तक के समस्त शब्दों की उपयोगिता स्वयं भगवान ब्रह्माजी ने भी स्वीकार की है। भगवान श्री विष्णु के चौबीस अवतारों में एक अवतार महर्षि सांख्या चार्य श्री कपिल देव को माना जाता है। महर्षि कर्दम की पत्नी से उत्पन्न कपिल देव ने अपनी आत्म साक्षात्कार प्रतिभा के कारण साक्षरता को प्राप्त कर विश्व विख्यात "सांख्य दर्शन" का प्रतिपादन किया। उन्होंने अपना सारा ज्ञान केवल अपनी माता देवहूति जी को ही सुनाया, जिसे सुनकर निरक्षर देवहूती जी भी परम ज्ञान व आलौकिक मोक्ष की अधिकारी बनी।

अक्षर ज्ञान की अनिवार्यता आदि काल से इस देश में की जाती है, तथा की जाती रहेगी। हमारे देश में अनेकों विचारक, संत व प्रचारक हुए हैं। उनमें से कुछ निरक्षर भी थे। उन निरक्षर विद्वानों ने भी अपने ज्ञान का महाप्रसाद वितरित करते हुए कहा कि उन्हें सदा इस बात का दुःख रहेगा कि अनुभवजन्य ज्ञान की उपलब्धि के पश्चात भी वे निरक्षर रहे। साक्षरता को वे परमात्मा का दिया विशेष वरदान मानते थे।

आज सम्पूर्ण विश्व में निरक्षरता का कुछ अंश मौजूद है। अनेक राष्ट्रों में आज भी निरक्षरों की उपस्थिति पाई जाती है। अतः इस निरक्षरता को समाप्त करने के लिए साक्षरों को आगे आना होगा। प्रत्येक साक्षर यदि अपने सम्पूर्ण जीवन काल में मात्र दस निरक्षरों को अक्षर ज्ञान प्रदान कर साक्षरता की ओर ले जाता है, तो यह उसका श्रेष्ठ राष्ट्रीय कर्त्तव्य माना जायेगा। साक्षरता का महा प्रसाद आज साक्षरों के माध्यम से वितरित किया जाना चाहिए। यह अनका अनिवार्य व नैतिक कर्त्तव्य होना चाहिए। साक्षरता युक्त जीवन गौरवशाली होता है। इस पावन प्रयास में आज अनेकों विश्वस्तरीय संस्थाएं अपना शक्ति लगा रही हैं। साथ ही साथ समर्पित, सेवाभावी व परोपकारी भावना वाले अनेकों साक्षर निरक्षरता के विरूद्ध कमर कस कर मैदान में डटे हुए हैं और अपना कार्य अर्हिनिश कर रहे हैं।

इस्लाम धर्म में उस परमात्मा को अल्लाह कहा गया है। इस अल्लाह शब्द में भी साक्षरता का समावेश पाया जाता है। भारतीय–आदि–व्याकरणाचार्य महर्षि पाणिनी ने "अल्लाह" शब्द की व्याख्या करते हुए बताया है कि "अलम आह – इति अल्लाह" जो "अ" से लेकर "ह" तक व्याप्त है वही अल्लाह है। शब्द में ही उस परम ब्रह्म की उपस्थिति सदा–सदा पाई जाती है।

शब्द ब्रह्म है और ब्रह्म सदा पूजनीय, वन्दनीय होता है। आज के साक्षरों में केवल एक कमी पाई जाती है कि वे शब्द को ब्रह्म नहीं मानते हुए यदा–कदा उनका अपमान भी करते रहते हैं। आज राजमार्गों पर, सड़कों पर, दीवारों पर, शौचालयों पर जो व्यापारिक विज्ञापन चिपकाये या लिखे जाते हैं वे कई बार मानव द्वारा शब्दों के निरादर का प्रमाण बनते हैं। यह सभी को याद रखना चाहिए कि शब्द को यदि ब्रह्म माना है तो उसका सम्मान भी, ब्रह्म जैसा करना आवश्यक है।

अंत में मानव मात्र को यह स्मरण करना चाहिए।

"उठ् बांध कमर–डरता है क्या।
फिर देख प्रभु करता है क्या।।"

अपनी कहानी सुनायेंगे हम....

– मृदुला सेठ

(हम सबकी जिन्दगी खत्म न होने वाली एक कहानी है। इस लम्बी कहानी में जुड़ी हैं कई छोटी–छोटी कहानियां।

जीवन के सफर में चलते हुए कई बार कोई विशेष व्यक्ति मिल जाता है। उसका हमारी सोच, समझ और व्यवहार पर गहरा प्रभाव पड़ता है। कभी कोई अनहोनी घटना हमारी जिन्दगी में ऐसा मोड़ लाती है जिसकी हमने कल्पना भी न की हो। जब हम किसी प्रोग्राम से जुड़ते हैं तो हमें लोगों से मिलने का मौका मिलता है। कई गतिविधियों में भाग लेने का अवसर मिलता है।

ये अनुभव ही तो है – हमारी अपनी कहानी क्या हुआ? कब? कैसे? क्या मुश्किलें आई? उनका सामना हमने कैसे किया? कौन बने सहायक? किन्होंने मुश्किलें बढ़ाईं? किसका प्रभाव हम पर पड़ा और किसे हमने प्रभावित किया?

सच्ची कहानियां पढ़ने से हमें प्रेरणा मिलती है। हमारी कहानियां दूसरें को प्रेरणा दे सकती हैं। इस श्रृंखला में हम बदलाव की कहानियां पेश कर रहे हैं। कुछ कहानियां स्वयं की लिखी हुई हैं। कुछ असाक्षर कथावाचकों की कहानियां दूसरों ने लिखी हैं। आशा है इसे पढ़ने और सुनने से आपको भी अपने में आए बदलाव की कहानी लिखने की प्रेरणा मिलेगी। प्रस्तुत है श्रृंखला की दूसरी आपबीती जो मीरा की कहानी कहती है। मीरा कछपुरा आगरा की रहने वाली महिला है। पिछले दो वर्षों से कैंप प्रोग्राम में काम कर रही है। वह कक्षा 12 तक पढ़ी है। समुदाय के कार्यक्रमों से महिलाओं और युवतियों को जुड़ने के लिए प्रेरित करती हैं।)

टॉयलेट गली

– मीरा

यह मेरी नहीं, टॉयलेट गली की कहानी है। आप सोचेंगे टॉयलेट गली? यह कैसा नाम है? यह नाम इसलिए पड़ा क्योंकि मेरे टॉयलेट के उदाहरण के कारण मेरी गली में काफी लोगों ने अपने घरों में टॉयलेट बनवाए, जिससे खासकर औरतों और बच्चों को सुविधा हुई। जब मैंने टॉयलेट का कार्य शुरू किया तो यह आसान नहीं था। मुझे कोई सहारा भी नहीं था।

बात उन दिनों की है जब मेरे एक भाई की मृत्यु के बाद मैंने अपने दूसरे भाई का सहारा लिया। अफसोस उसने भी मेरे साथ विश्वासघात किया। उसने मेरे मकान का आधा हिस्सा भी ले लिया। हिस्सा लिया भी तो वह, जिधर बाथरूम व टॉयलेट बने थे। बीच में से पार्टीशन हो गया। अब मैं और मेरा परिवार टॉयलेट के लिए खेतों में जाने लगा। मेरे बच्चे बहुत परेशान हो जाते थे क्योंकि उन्हें आदत नहीं थी। बच्चों की परेशानी देखकर मैं बहुत उदास हो जाती थी। मैंने भगवान से प्रार्थना की कि वे जल्दी बच्चों की परेशानी दूर करें। यह सोचते–सोचते मैं सो गयी। अगले दिन की बात है कि यू.एस.आई.डी. से चेतन सर मेरे घर आये। उनके साथ साकेत सर व राजेश सर भी थे। मैंने तीनों लोगों को नमस्ते किया और अन्दर कमरे में बैठने को कहा। पर सर आंगन में ही खड़े रहे। आंगन को देखकर आपस में कुछ बाते करने लगे। मैं समझ नहीं पा रही थी कि सर किसके बारे में चर्चा कर रहे हैं। फिर चेतन सर ने मुझे अपने पास बुलाया और कहा, 'मीरा क्या तुम अपना टॉयलेट बनवाना चाहती हो?' सर की बात खत्म होने से पहले ही मैंने हां कर दी। यह भी नहीं सोचा कि पैसा कहां से आयेगा। मैं पैसे की चिन्ता न करते हुए इतनी खुश थी कि सर से बोल भी नहीं पा रही थी। चेतन सर ने मुझे अपने गले से लगा लिया। मेरी पीठ थपथपायी कि इतनी परेशान होने के बावजूद भी तुमने टॉयलेट बनवाने के लिए हां कर दी।

सर को सब कुछ पहले से पता था कि इसका भाई जो इसका सहारा था वह स्वर्गवासी हो गया है और इसकी टॉयलेट इसके दूसरे भाई ने छीन ली है। तीनों लोगों ने मुझे समझाया 'मीरा तुम्हें चिंता करने की कोई जरूरत नहीं है। हम तुम्हारे साथ हैं। टॉयलेट का खर्चा हम करेंगे। तुम हमारे साथ मिलकर अच्छा कार्य करती हो। थोड़ा–थोड़ा पैसा अपने अनुसार महीने के महीने दे दिया करना। कुछ पैसा तुम्हें अनुदान में भी मिलेगा।' उसके बाद तीनों सर ऑफिस चले गये। उन के जाने के बाद मैं अपने बच्चों के साथ बैठकर टॉयलेट की बात करने लगी। मैंने कहा 'मेरे प्यारे बच्चों अब तुम्हें ज्यादा दिन परेशानी नहीं उठानी पड़ेगी। हमारे घर में एक नया टॉयलेट बन जाएगा और बहुत जल्दी तुम्हारी परेशानी दूर हो जायेगी।' पर बीच में ही बात रोककर मेरी बड़ी बेटी दीपिका बोली 'मम्मी टॉयलेट में तो बहुत पैसा खर्च होता है। इतना पैसा आप कहा से लाओगी?' तब मैंने अपनी बेटी को समझाया 'नहीं बेटी, पूरे टॉयलेट में दस हजार रूपये लगते हैं। सर हमसे किस्तों में पैसा लेंगे।' अगले दिन राजेश सर ने मुझे ऑफिस बुलाया। कहा, 'मीरा अब तुम अपने टॉयलेट बनवाने की तैयारी में लग जाओ और गड्ढ़ा कल तक खुदवा लो। कल टॉयलेट बनाने वाले तुम्हारे घर आ रहे हैं।' मैं दोपहर में घर आ गयी और इंची टेप लेकर जगह को नापने लगी क्योंकि हमारे आंगन में रायसीन की फली का एक बहुत पुराना पेड़ था जिसके कारण गड्ढ़ा खोदने में दिक्कत हो रही थी। तभी गली की चार–पांच महिलायें आ गयी और बोली 'मीरा जगह क्यों नाप रही हो? क्या कमरा बनवा रही हो?' तब मैंने कहा 'नहीं टॉयलेट बनवा रही हूं।' तुरन्त ही उनमें से एक महिला बोली 'का करे, पूरे गांव में तो घूमी है बिचारी, जगह–जगह मीटिंग करी है, कोई नहीं बनवा

रहा है। ऐसे में सही है अपना ही बनवा ले। इनके यहां एक योजना आयी है सो अपनी ही टॉयलेट बनवा के दिखा देगी और संस्था का सब पैसा सर और ये खा लेंगी।' मेरा ध्यान तो अपनी जगह की नाप–तोल में लगा था और वह मेरा समय बर्बाद कर रही थी।

मैं सोच रही थी कि पेड़ का क्या करूं। मेरा ध्यान तो गड्ढ़े और पेड़ पर था। मैंने किसी भी महिला से कुछ नहीं कहा। कुछ देर बाद मैंने नापने का काम बन्द कर दिया। शाम को जब मेरे पति घर आये तो मैं बच्चों से टॉयलेट के बारे में बातचीत कर रही थी। मेरे पति बोले 'भाई क्या बात है? आज मां–बच्चे बड़े खुश है? क्या सलाह कर रहें है सभी, हमें भी बताओ।' उसी समय मेरा 7 वर्ष का छोटा बेटा हेमन्त बोला 'पापा, आप पेड़ काटकर जल्दी से गड्ढ़ा खोद दीजिए। मम्मी टॉयलेट बनवा रही हैं।' मेरे पति अचम्भे से मेरी तरफ देखने लगे। तभी मैंने सिर हिलाकर कहा, 'हां यह सही कह रहा है। खाना खाकर पेड़ काट देना। गड्ढ़ा रात में ही खोदना है क्योंकि जो टॉयलेट बनवा रहें वे कल आ रहें हैं। वे गड्ढ़ा देखना चाहते हैं।' खाना खाकर मेरे पति ने पेड़ काटा। हमने जल्दी–जल्दी लकड़ियां छत पर पहुंचायी और जगह साफ करके गड्ढ़ा खोदना शुरू कर दिया। पूरी रात मेरे पति ने गड्ढ़ा खोदा। मैंने मिट्टी बाहर निकालने में उनकी सहायता की। सुबह तक हमने गड्ढ़ा पूरा खोदकर तैयार कर दिया। लेकिन दूसरे दिन ना ही कोई सर मेरे घर आये और ना राजेश सर ने मुझसे पूछा की मीरा गड्ढ़ा खुदा या नहीं। शाम हो गयी। इधर गली के सभी लोग अचम्भे में थे कि कल तो यहां पेड़ था आज यहां गड्ढ़ा कैसे खुदा? कब खुदा? उन्हें यह तो सपना सा लग रहा था।

गड्ढ़े को खुदे एक दिन क्या, चार दिन हो गये और उधर गली वाले मेरी हंसी उड़ाने लगे। मैं और मेरा परिवार हंसी–मजाक का केन्द्र बन गये। 'बड़ी चली थी टॉयलेट बनवाने। चार दिन से गड्ढ़ा खुदा पड़ा है कोई देखने तक नहीं आया है। गड्ढ़ा तो ऐसे खुदवाया था रातों–रात जैसे टॉयलेट देखते–देखते बन जाएगा। कहीं नहीं बन रही टॉयलेट। संस्था का काम तो सालों का होता है। पेड़ से छाया रहती थी वह भी चली गयी, टॉयलेट के चक्कर में पेड़ भी कटवा दिया।' लोग इस तरह बातें करने लगे। यह सुनकर मेरे अन्दर शर्म सी आने लगी। मैं घबराने लगी। मैंने भगवान से प्रार्थना की कि हे भगवान तुम मेरी हंसी मत उड़वाओ। ये सभी लोग ताने कस रहे हैं। मुझे अच्छा नहीं लगता। उससे अगले ही दिन की बात है राजेश सर का फोन आया, 'मीरा कल तुम्हारे यहां टैंक डलेंगे, तुम घर पर ही रहना और उसके बाद एक अच्छा मिस्त्री भी खोजो जो टॉयलेट बना सकें।' बर फिर आंखों में टॉयलेट का नक्शा उभरने लगा। अगले दिन की बात है – तीन ऑटो में लदकर टैंक मेरे दरवाजे पर रूके। मैंने उस दिन लड्डू भी बांटे। मेरी खुशी का ठिकाना नहीं था क्योंकि यह टॉयलेट मैं अपने अकेले के बलबूते पर बनवा रही थी। इससे पहले तो मैं हर कार्य भाई की सलाह से करती थी। जब मैं मिस्त्री और रेता के लिए बोलकर घर लोट रही थी, तो मुझे

लग रहा था कि मानो कोई प्रेरणा मुझे आगे धकेल रही थी कि मीरा अभी तो तुझे बहुत कुछ करना है। तुझे घबराना नहीं है। दूसरे दिन मेरा टॉयलेट बनना शुरू हो गया। चार दिन टॉयलेट बनवाने में लगे। ये चार दिन एक तरह से मेरी खुशी के दिन थे। जिन लोगों के दरवाजे पर जाकर पहले मैं पूछती थी कि क्या आप टॉयलेट बनवाओंगे? आज वे खुद आकर मेरे घर पहले तो बैठते, शौचालय को देखते और फिर धीरे–धीरे डरते–डरते बोलते कि हम भी टॉयलेट बनाना चाहते हैं। टॉयलेट बनने के बाद मेरे घर में बैठे ही बैठे 10 लोग टॉयलेट बनवाने को तैयार हो गए। टॉयलेट बनवाने की इस घटना के बाद एक–एक कर नये सदस्य हमसे स्वयं आकर जुड़ रहे हैं और मेरे जैसे ही टॉयलेट बनवाने की सोच रहे हैं। मेरा अपना टॉयलेट पूरा होने पर मैंने सर से आज्ञा ली और अपने लोगों के लिए बारी–बारी से लगातार 9 टॉयलेट बनवाये। 4 टॉयलेट मेरी गली में पहले से थे इसलिए मेरी गली आज टॉयलेट गली के नाम से जानी जाने लगी जिसे अब एक स्वच्छ गली का नाम दिया गया है।

❍❍❍❍❍

राष्ट्रपति द्वारा राष्ट्र को संबोधन

गणतंत्र दिवस 2010 की पूर्व संध्या पर राष्ट्रपति श्रीमती प्रतिभा देवी सिंह पाटिल ने सम्पूर्ण राष्ट्र को सम्बोधित किया। अपने सम्बोधन में उन्होंने समस्त नागरिकों से आग्रह किया कि वे अपनी बेहतरी के लिए हर संभव प्रयास करते हुए उन समस्त गुणों का भी अपने में समावेश करें जिससे वे स्वयं से की जा रही राष्ट्रीय अपेक्षाओं को पूरा कर सकें। प्रासंगिकता के मद्देनजर अक्षरसः प्रस्तुत है राष्ट्रपति का वह भाषण।

प्यारे देशवासियों,

इकसठवें गणतंत्र दिवस की पूर्व संध्या पर मैं, देश–विदेश में रह रहे सभी देशवासियों का हार्दिक अभिनन्दन करती हूं। हमारी सीमाओं की रक्षा करने वाले सशस्त्र बलों, सैनिक बलों, और आंतरिक सुरक्षा बलों को मैं अपनी विशेष शुभकामनाएं देती हूं।

इस वर्ष 26 जनवरी को हमारे कार्य और कड़ी मेहनत से भरे छह दशक पूरे हो रहे हैं। इस दौरान हमारा मार्गदर्शन, गहन विचार–विमर्श के बाद 1950 में अंगीकृत संविधान के सिद्धांतों और उद्देश्यों ने किया है। मैं, महात्मा गांधी के 8 अगस्त, 1942 को भारत छोड़ो आंदोलन की शुरूआत के समय दिए गए भाषण को अक्सर याद करती हूं। उन्होंने कहा था कि जब सत्ता मिलेगी तो वह भारत की जनता की होगी। संविधान के प्रारम्भ में 'हम, भारत के लोग' इन्हीं शब्दों में राष्ट्रपिता की इस अभिलाषा को व्यक्त किया गया है। यह एक दृढ़ संकल्प था कि राष्ट्र की आकांक्षाओं और इसके भविष्य का पथ पदर्शन इसकी जनता द्वारा किया जाएगा। वे अपनी अभिलाषाओं और पसंद को लोकतांत्रिक ढंग से व्यक्त करेंगे। वे अपने मौलिक अधिकारों का भी अनुभव करेंगे जो उन्हें स्वतंत्रता और आत्मसम्मान का आश्वासन देते हैं। मूल्यों को कायम रखना, राष्ट्र की दिशा तय करना और विकास की गति को बढ़ाना, ये ऐसे कार्य हैं, जिन्हें देश के सभी नागरिकों को पूरा करना चाहिए। आज का दिन हमें यह याद दिलाता है।

21वीं शताब्दी के पहले दशक के दौरान भारत में आमूल परिवर्तन आए हैं और यह खुद भी विश्व में बदलाव लाने वाली शक्ति के रूप में उभरा है। वास्तव में, हमारी उपलब्धियों और अनुभवों ने राष्ट्र को एक निर्णायक मुकाम पर पहुंचा दिया है। यहां से हम दृढ़ विश्वास और निष्ठा के साथ मिलकर कार्य करेंगे तो एक विकसित और प्रगतिशील राष्ट्र के अपेक्षित उज्जवल भविष्य का दावा कर सकते हैं। लेकिन अपनी कमियों को दूर करने और अपने गुणों को एक ऊर्जावान शक्ति में बदलने के दौरान हमें पूरी तरह जागरूक होना चाहिए कि हमें क्या सहेजकर रखना है और क्या बदलना है।

सबसे ज्यादा जरूरी है कि हम अपने लोकतांत्रिक सिद्धांतों और जीवन–शैली को कायम रखें। हमने एक सक्रिय लोकतंत्र के रूप में, मतदान द्वारा अपनी सरकारों को चुनकर और लोकतंत्र को जमीनी स्तर तक ले जाकर, इस बात को बार–बार बखूबी प्रदर्शित किया है। साथ ही, जैसा कि हम जानते हैं कि लोकतंत्र की हमसे बहुत सारी अपेक्षाएं होती हैं। यह एक विधिक शासन है। यह एक तर्कयुक्त शासन है। और जैसा कि भारत ने विश्व को बताया है कि यह एक अहिंसा का शासन है। लोकतंत्र में वह व्यवहार शामिल है जिसके अंतर्गत प्रत्येक व्यक्ति को जिम्मेदारी से कार्य करना होगा, अलग–अलग विचारों का सम्मान करना होगा और मतभेदों पर सकारात्मक और मैत्रीपूर्ण ढंग से ध्यान देना होगा। इससे सौहार्द और सहनशीलता पैदा होती है। ये मूल्य हमारे जीवन दर्शन के महत्वपूर्ण अंग हैं। ये, एक ऐसे समाज की नींव हैं, जो एक समग्र इकाई के निर्माण के लिए विभिन्न भाषाओं, धर्मों और संस्कृतियों को अपना लेते हैं। हमारे जैसे विशाल और विविधतापूर्ण राष्ट्र को इन मूल्यों का निरंतर पालन करना चाहिए।

हमारे संविधान में धर्मनिरपेक्षता का जो मार्ग चुना गया है, उसमें सभी धर्मों के प्रति आदर निहित है। हमारे राष्ट्रीय जीवन में इसके स्थान को कभी नहीं बदला जा सकता। भारत एक ऐसा देश है जहां विभिन्न धर्मों के अनुयायी सदियों से रह रहे हैं। हमें सामाजिक समरसता को बनाए रखना है। हमारी मिलजुल कर रहने की परम्परा जारी रहनी चाहिए ताकि यह हमारी भावी पीढ़ियों के जीवन–प्रवाह का एक अभिन्न हिस्सा बन सके।

प्रकृति के प्रति गहरा सम्मान रखने वाली सभ्यता होने के कारण, हमें एक जागरूक पृथ्वीवासी भी बनना होगा, जिसमें जलवायु परिवर्तन एक प्रमुख चुनौती बन गई है। हमें समझदारी के साथ इसके संसाधनों का उपयोग करना होगा, इसकी समृद्ध वनस्पति और जीवों का संरक्षण करने के लिए कार्य करना होगा तथा पर्यावरण अनुकूल तरीके अपनाने होंगे। ऊर्जा दक्ष तकनीकी और अक्षय ऊर्जा के स्रोतों का उपयोग, कुछ ऐसे कदम हैं, जिनसें कार्बन का परिमाण कम होता है।

प्यारे देशवासियों,

हमारे देश ने शानदार प्रगति की है। क्रय शक्ति समता की दृष्टि से हम विश्व की चौथी सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था हैं। पिछले दशक के हमारे प्रभावशाली निष्पादन और वैश्विक आर्थिक मंदी सहन करने की हमारी शक्ति को देखते हुए, दोहरे अंकों वाली विकास दर हासिल करने का लक्ष्य पूरा करना उपयुक्त और संभव है। हमें उन नीतियों को निरंतर जारी रखना है, जिनसे विकास को बढ़ावा मिलता है और जो साथ ही प्रगति को समाज के निचले स्तर और इससे वंचित लोगों तक पहुंचाते हैं। निर्धनों और अपेक्षितों का सशक्तीकरण, उन्हें आर्थिक विकास के उच्च सोपानों तक पहुंचने में सक्षम बनाना और समृद्ध की श्रेणी में लाना, ऐसे कार्य हैं, जिन्हें हम सभी को पूरा करना होगा। महिलाओं को पूर्ण और बराबर का साझीदार बनाया जाना चाहिए। हमारे द्वारा अपनाई गई समावेशी विकास कार्यनीति से विकास

प्रक्रिया को सतत एवं समतापूर्ण बनाया जा सकता है।

समावेशी विकास हासिल करने के लिए सामाजिक न्याय जरूरी है। इसे प्रभावी सामाजिक क्षेत्र के बुनियादी ढांचे के जरिए प्रदान किया जा सकता है। सामाजिक सेवाओं और रोजगार के अवसरों के साथ–साथ, सभी नागरिकों को उत्तम शिक्षा और बेहतर स्वास्थ्य सेवाएं उपलब्ध करवानी होंगी। इससे कौशलयुक्त, ज्ञानवान और उत्पादकतापूर्ण कार्य करने वाले मानव संसाधन का सृजन होगा। इसलिए, हमारा ध्यान इस ओर विशेष रूप से केन्द्रित होना चाहिए, क्योंकि हमारी आबादी युवा है। उनकी परवरिश करनी होगी और उन्हें अपनी जिम्मेदारियां निभाने के लिए तैयार करना होगा। सभी क्षेत्रों का भावी विकास, ज्ञानसम्पन्न कर्मियों और कुशल जन–शक्ति पर निर्भर करता है। वे हमारी अर्थव्यवस्था को गतिशील, हमारे सेवा क्षेत्र को कुशल और प्रतिस्पर्द्धी, हमारे निर्माण उद्योगों को व्यापक और हमारे कृषि तथा इससे संबंधित क्षेत्रों को मजबूत बना सकते हैं। इसके अलावा, इन विभिन्न क्षेत्रों, जैसे कृषि और उद्योग को आपस में जोड़ने और इनमें संपर्क स्थापित करने से विकास को बल मिलेगा। अनेक स्तरों पर सम्पर्क स्थापित करके इन संबंधों को और सुदृढ़ किया जा सकता है। एक ऐसा देश जो भौगोलिक रूप से सातवां तथा जनसंख्या की दृष्टि से दूसरा सबसे बड़ा है, उसके लिए हमारा मौजूदा बुनियादी ढांचा अपर्याप्त है। इससे सम्पर्क बाधित और अवरूद्ध होता है। हमें इस स्थिति को बदलना होगा। पुलों, सड़कों, बंदरगाहों तथा हमारी बिजली उत्पादन क्षमता, परिवहन सुविधाओं आदि को व्यापक स्तर पर बढ़ाना होगा। लेकिन हमें यह नहीं भूलना है कि सीमेंट, इस्पात और गारे के मिश्रण से बने इन ढांचों के साथ–साथ यह भी महत्वपूर्ण है कि हमें अपने मतभेदों के बीच पुलों का निर्माण करना होगा, दिलों और दिमागों को जोड़ने वाले रास्ते बनाने होंगे, सहृदयता का जल संग्रहित करना होगा, सबके प्रति सद्भावना की ऊर्जा उत्पन्न करनी होगी और इन भावनाओं का परिवहन राष्ट्रीय एकता की मजबूती के लिए करना होगा। हमें अपने देशवासियों के लिए एक ऐसा माहौल तैयार करना होगा जिसमें वे अपने अधिकारों का प्रयोग करने के साथ अपने कर्त्तव्यों को भी निभा सकें। यह एक अरब से अधिक आबादी वाले लोकतांत्रिक राष्ट्र के विकास में लोगों की भागीदारी के लिए तथा उसे सतत बनाए रखने के लिए जरूरी है। आने वाले दशक में, हमें बुनियादी ढांचे का निर्माण तेजी से करने के साथ–साथ लोगों की आपसी समरसता को भी बढ़ाना होगा।

निर्धारित नीतियों और योजनाओं तथा आबंटित विशाल धन राशि से अपेक्षित परिणाम हासिल न होने के पीछे सबसे बड़ी बाधा और समस्या कमजोर कार्यान्वयन और व्यवस्था में भ्रष्टाचार का होना है। शिथिल कार्यान्वयन की इस पुरानी बीमारी के कारणों का उपचार करना होगा। परियोजनाओं, कार्यक्रमों और योजनाओं के कार्यान्वयन की कमियों की जवाबदेही तय होनी चाहिए। सकारात्मक बदलाव लाने के लिए ऐसा करना बेहद जरूरी है।

सार्वजनिक–निजी साझीदारी और स्व–सहायता समूह, परिणाम से युक्त कार्य और विकास के हिस्सेदारों के एक व्यापक तंत्र के निर्माण के महत्वपूर्ण तरीके हैं। ऐसे अनेक उदाहरण हैं जिनमें शहरी

और ग्रामीण इलाकों में रहने वाली महिलाएं स्व–सहायता समूह के जरिए वित्तीय रूप से आत्मनिर्भर बनी हैं। इन समूहों के व्यापक विस्तार के लिए एक अभियान की आवश्यकता है जिससे सभी पात्र महिलाओं को इसके दायरे में लाया जा सके। यह महिलाओं के आर्थिक सशक्तीकरण और समावेशी विकास का एक प्रबल माध्यम बन सकता है। ऐसे समूहों की स्थापना और प्रक्रिया में मदद करने से प्रगति और बदलाव की लहर पैदा होगी।

प्यारे देशवासियों,

हमारे देश की तरह पूरे विश्व में खाद्यान्न की मांग बढ़ रही है। यह स्थिति हमें आगाह करती है कि हमें कृषि उत्पादकता बढ़ाने पर गहराई से ध्यान देना होगा जिससे कि खद्यान्नों की उपलब्धता सुनिश्चित की जा सके, विशेषकर उन कृषि उत्पादों, जिनकी आपूर्ति कम है ताकि बढ़ती हुई कीमतों से बचा जा सके। इस बहुत महत्वपूर्ण उद्देश्य को पूरा करने के लिए, मैं दूसरी हरित क्रांति की दिशा में तुरंत कदम उठाने पर जोर देना चाहूंगी। इसके लिए नई तकनीकों, बेहतर बीजों, उन्नत कृषि तरीकों, प्रभावी जल प्रबंधन तकनीकों और उन अधिक मजबूत ढांचों की आवश्यकता है जो किसानों को वैज्ञानिक समुदाय, ऋण देने वाली संस्थाओं तथा बाजारों से जोड़ें। हमारे किसान काम करने, कमाने और सीखने के इच्छुक भी हैं और तैयार भी हैं। हमें सकारात्मक कारवाई करनी होगी और इस पर पारम्परिक गतिविधियों से हटकर विचार करना होगा। खेती में अधिक आय से देश के छह लाख से ज्यादा गांवों के साढ़े चौदह करोड़ से ज्यादा परिवारों के जीवन स्तर में सुधार आएगा। आय अधिक होने से ग्रमीण अर्थव्यवस्था में मांग बढ़ेगी और अन्य क्षेत्रों के विकास को भी गति मिलेगी। इस सच्चाई को जानते हुए, हमें उत्पादन के केन्द्र और विभिन्न उत्पादों और सेवाओं की मांग को बढ़ाने वाले साधन के रूप में, कृषि अर्थव्यवस्था को सक्रियता से विकास प्रक्रिया में शामिल करना होगा। कृषि समुदाय और कार्पोरेट जगत के बीच बहुत–सी पूरकताएं मौजूद हैं क्योंकि दोनों में निजि उद्यम हैं। उद्योग और कृषि, दोनों के लिए लाभकारी साझीदारी की संभावनाओं का पता लगाना चाहिए। उदाहरण के लिए, खाद्य प्रसंस्करण उद्योग को कृषि क्षेत्रों के नजदीक स्थापित करने से भारत के ग्रमीण परिदृष्य में बदलाव लाया जा सकता है। वर्तमान में, भारत का खाद्य प्रसंस्करण विकसित देशों के पैंसठ से अस्सी प्रतिशत की तुलना में उत्पादन का केवल दस प्रतिशत है। कृषि आधारित अन्य उद्योग भी विकास की गति को तेज करने के लिए जरूरी हैं। सवाल यह है कि ऐसी साझेदारी की ओर किसानों को कैसे आकर्षित किया जाए जो किसानों पर प्रतिकूल प्रभाव न डालें बल्कि किसानों के हितों को सबसे आगे रखें और उनकी विभिन्न भावनाओं, विशेषकर उनकी भूमि की मलकियत कायम रखने पर ध्यान रखें। यह कार्य किसानों के लिए अनुकूल तरीकों और कृषि समुदाय में जागरूकता पैदा करके किया जा सकता है। कुछ भारतीय कम्पनियां जान गई हैं कि किसानों को औद्योगिक इकाइयों के साथ जोड़ना, दोनों के लिए लाभकारी होगा। उन्होंने कृषक समुदाय के साथ जुड़ने के कुछ मॉडल तैयार किए हैं। हमें ग्रामीण अर्थव्यवस्थाओं की क्षमता का उपयोग करने

के लिए, भारतीय परिस्थितियों के अनुरूप व्यावहारिक विकल्पों पर विचार करने के दौरान इन अनुभवों का अध्ययन करना चाहिए।

प्यारे देशवासियों,

आज हमारे राष्ट्रीय कार्य के समग्र परिदृश्य में पूंजी, श्रम और संसाधन का अधिकतम प्रयोग अत्याधुनिक तकनीकी और तकनीक कामयाबी पर निर्भर करता है। हमें ज्यादा कारगर और स्वच्छ ऊर्जा तथा अपने उद्योगों और कृषि के लिए तकनीकी चाहिए। भारत को अनुसंधान और विकास को बढ़ावा देने के लिए कार्यनीतियां तैयार करनी होंगी जिनसे नए–नए तरीके और तकनीक हासिल हो सकें। ज्ञान संरचना निर्मित करने के लिए हमारे देश की अनुसंधान गुणवत्ता को बढ़ाना पड़ेगा। मेरे विचार से राष्ट्र को यह काम बहुत जरूरी समझकर करना चाहिए। ज्ञान आधरित अर्थव्यवस्था के लिए एक ऐसी शिक्षा प्रणाली की जरूरत है जो रचनात्मकता और नए तरीके से सोचने की क्षमता को प्रोत्साहित करें। इसके अलावा, हमारे अनुसंधान संस्थानों को विश्व ज्ञान नेटवर्क में शामिल होना चाहिए जिससे विज्ञान और तकनीक के क्षेत्र में होने वाली विश्वव्यापी उन्नति की भी जानकारी रख सकें। समाज के व्यापक वर्ग तक तकनीकी पहुंचनी चाहिए और जमीनी स्तर पर नवाचार अभियान को भी बढ़ावा मिलना चाहिए।

एक जरूरी बदलाव, जिसके बारे में मैं अक्सर कहती रही हूं, वह है सामाजिक कुरीतियों को दूर करना, खासकर महिलाओं के प्रति भेदभाव। एक ज्यादा प्रगतिशील और समतामूलक राष्ट्र के निर्माण की राह में ये बाधाएं हैं। हमें महिलाओं के सशक्तीकरण के लिए एक सकारात्मक कार्यक्रम अपनाना होगा। संकीर्णता दूर करने और सभी नागरिकों के लिए बराबर अवसर पैदा करने के लिए, हमारी मानसिकता में बदलाव लाना जरूरी है। यह समावेशी विकास कार्यक्रम और हमारी आबादी की पूर्ण क्षमता को प्रयोग में लाने के लिए आवश्यक है।

कोई भी कार्य, खासतौर से, राष्ट्र निर्माण जैसे जाटिल और चुनौतीपूर्ण कार्य के लिए, जैसा कि हमारे प्रथम प्रधानमंत्री पंडित जवाहरलाल नेहरू जी ने कहा था, "हमें काम करना होगा, ज्यादा काम करना होगा और मेहनत करनी होगी ताकि हम अपने सपनों को साकार कर सकें।" इसके लिए, प्रेरणा के स्तर को ऊंचा रखना होगा।

देश को लोग किस नजर से देखते हैं, इसमें मीडिया की अहम भूमिका हो सकती है। तकनीक में निरंतर प्रगति से, मीडिया अब हमारे दैनिक जीवन का एक अटूट हिस्सा बन चुका है। यह लोगों को सूचना प्रदान करके जागरूकता फैला सकता है, उनमें विचारशीलता पैदा कर सकता है और राष्ट्र के प्रति उनके दायित्वों की जानकारी दे सकता है। ऐसी रचनात्मक भूमिका निभाने वाले मीडिया के होने से, लोगों को राष्ट्र निर्माण में योगदान करने के की प्रेरण मिलेगी और सकारात्मक कार्यों के फायदों की जानकारी भी मिलेगी।

विकास के लिए सुरक्षापूर्ण माहौल जरूरी है। सरकार आंतरिक सुरक्षा की चुनौतियों से निपटने के लिए अत्याधिक चौकसी बरतने और उपयुक्त कदम उठाने के लिए प्रतिबद्ध है। हमारा देश दो

दशक से ज्यादा समय से आतंकवाद का निशाना रहा है। सरकार ने आतंकवाद से पैदा होने वाले खतरों से निपटने के लिए आवश्यक सुरक्षा उपाय किए हैं और करती रहेगी। और वह इस संकट का मुकाबला करने के लिए अंतर्राष्ट्रीय समुदाय के साथ भी कार्य करेगी।

दुनिया में भारत की भावी आवाज, विगत की भांति, शांति की आवाज, विकास की आवाज और उम्मीद की आवाज होनी चाहिए। विश्व मंच पर हम बहुपक्षीय संस्थाओं की संरचना में बदलाव चाहते हैं ताकि ये सामयिक वास्तविकताओं को दर्शा सकें। हम वैश्विक मुद्दों से निपटने के लिए अंतर्राष्ट्रीय समुदाय के साथ सहयोग करते रहेंगे। हम अपने क्षेत्र और विश्व के अन्य देशों के साथ मैत्रीपूर्ण संबंध बनाएंगे।

वर्ष 2009 के समाप्त होने पर, इस बारे में बहुत से विश्लेषण किए गए हैं कि भारत की अगले दशक में क्या संभावनाएं होंगी। कुछ इसे निर्णायक दशक, और आकलन का दशक बताते हैं। विचार करने पर, मैं पूर्ण रूप से सहमत हूं कि ऐसा ही होगा। इसका अर्थ यह है कि इस दशक में प्रत्येक भारतीय को अपना कार्य जिम्मेदारी, अनुशासन, सच्चे मन और उद्देश्य तथा सहयोग की भावना के साथ करना होगा। हमें अपनी युवा पीढ़ी को प्रेरित करना होगा कि वह गुणवान हो, चरित्रवान हो और दूसरों के प्रति मैत्रीपूर्ण भावना रखें। हमें अपने सारे प्रयास देश को समग्र राष्ट्रीय विकास के उच्च स्तर पर ले जाने के लक्ष्य को पूरा करने में लगाने चाहिए। हमें तब तक नहीं रूकना है जब तक हम इस लक्ष्य को हासिल नहीं कर लेते। अपने कार्य को पूरा करने और जिम्मदारी को पूरी तरह निभाने पर ही हम गौरव का अनुभव कर सकते हैं। यह कहा गया है कि समृद्धि और भाग्य कड़ी मेहनत का परिणाम है और यहि हमने अपने कार्य पर ध्यान नहीं दिया तो हम उनसे वंचित हो सकते हैं। मुझे कुछ प्रेरक पंक्तियां याद आ रही हैं :

तय की हैं हमने,
ऐसी कुछ मंजिलें।
कि नहीं रूकेंगे हम,
आगे बढ़ते रहेंगे हम,
हर कदम दर कदम,
जब तक दम में है दम।

इन्हीं शब्दों के साथ, मैं एक बार फिर हमारे गणतंत्र दिवस के अवसर पर सभी देशवासियों के लिए शांति, समृद्धि और प्रगति की कामना करती हूं।

जय हिन्द।

○○○○○

कन्या भ्रूण हत्या : माता–पिता की जबावदेही

— अनूपी समैया

प्राचीन भारत के सांस्कृतिक इतिहास का अध्ययन करने से यह स्पष्ट होता है कि भारत की पावन धरती पर स्त्रियों को सदैव आदर और श्रद्धा की दृष्टि से देखा जाता रहा है। प्रारम्भ में हिन्दु समाज में महिलाओं को काफी अधिकार और सम्मान प्राप्त थे लेकिन वैदिक काल के बाद समाज की भौतिक व्यवस्थाओं ने रूढ़ियों का रूप ग्रहण कर लिया जिसके कारण ये अधिकार एवं सम्मान दोनों ही कम होते चले गये। मध्यकाल के दौरान भारतीय समाज में स्त्रियों की दशा सबसे ज्यादा खराब रही। धीरे–धीरे समाज में बदलाव आया। परन्तु समाज के बदलने के साथ–साथ स्त्रियों को पुरूषों के समान सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक अधिकार प्राप्त हुए तथा अनेक क्षेत्रों में उन्होंने पुरूषों से भी अधिक श्रेष्ठता हासिल की।[1]

आज स्त्रियां जिस तेजी के साथ शिक्षा के क्षेत्र में उन्नति कर रही हैं 50 वर्ष पूर्व इसकी कल्पना भी नहीं की जा सकती थी। वास्तव में शिक्षा ने स्त्रियों को घर की चहार–दीवारी से बाहर लाने में सहायता की है एवं उन्हें पाश्चात्य स्वतंत्रता और प्रजातंत्र के आदर्शों के नजदीक लाकर खड़ा कर दिया है। शिक्षा, स्वास्थ्य, चिकित्सा, समाज कल्याण, मनोरंजन उद्योग और कार्यालयों में महिलाओं की संख्या निरन्तर बढ़ती जा रही है। उनके आत्म–विश्वास, कार्य क्षमता और मानसिक स्तर में जो प्रगति हुई है वह उनको मिली हुई आर्थिक स्वतंत्रता का ही परिणाम है। स्त्रियों की पारिवारिक स्थिति में आज अनेक महत्वपूर्ण परिवर्तन देखने को मिलते हैं। आज वे परिवार में एक प्रबंधक की स्थिति में हैं, याचिका की नहीं। स्त्री की इच्छा का महत्व बच्चों की शिक्षा, पारिवारिक आय के उपयोग, संस्कारों के संवहन और पारिवारिक योजनाओं के निर्धारण करने में निरन्तर बढ़ा है। राजनीति के क्षेत्र में स्त्रियों की स्थिति में जिस प्रकार उन्नति हो रही है और वह जिस तेजी से ऊंची उठ रही हैं वह एक आश्चर्य का विषय है।[2]

आजादी के 60 वर्षों बाद देश के हर क्षेत्र में महिलाओं ने अपनी मौजूदगी दर्ज करा दी है। बावजूद इसके भारतीय समाज में बालिकाओं की संख्या निरन्तर घटती जा रही है। यूनीसेफ के वर्तमान प्रतिवेदन के अनुसार भारत में बढ़ रही कन्या भ्रूण हत्या के परिणामस्वरूप स्त्री–पुरूष अनुपात बिगड़ता जा रहा है। कन्या भ्रूण हत्या नारी हत्या का घृणित स्वरूप है। इस घृणित स्वरूप को विकसित किया है माँ के गर्भ की जांच करने हेतु मानव द्वारा की गई वैज्ञानिक खोज ने। गर्भजल परीक्षण या एम्नियोसेन्टेसिस का प्रारंभ आनुवांशिक विकृतियों, रोगों, गुणसूत्रों में दोषों आदि का पता लगाने के उदेश्य से किया गया था। यह एक वैज्ञानिक उपलब्धि थी क्योंकि इन परीक्षणों से 72 असाध्य एवं वंशानुगत रोगों की पुष्टि की जा सकती थी और गर्भस्थ शिशु में कोई रोग या दोष होने पर तुरन्त ही उसका उपचार प्रारम्भ किया जा सकता था, किन्तु इस परीक्षण से शिशु के लिंग की जानकारी मिल जाने के कारण यह शीघ्र ही वरदान से अभिशाप में परिवर्तित हो गया।[3]

प्रारंभ में तो यह परीक्षण गर्भस्थ शिशु के बारे में पूरी जानकारी प्राप्त कर लेने की उत्सुकता को नहीं रोक पाने के कारण कराया जाता रहा, किन्तु शीघ्र ही उत्सुकता व ममता का स्थान बेटी को बेटे से हीन मानने

वाली दुर्भावना ने ले लिया और यह परीक्षण गर्भ में लड़का है या लड़की यह जानकारी प्राप्त करने की कुटिल, स्वार्थी व द्वेषपूर्ण भावना से कराया जाने लगा। बेटी को बेटे से हीन समझने अथवा उसे भार मानने वाली समाज की इस निम्न मानसिकता के कारण कुछ स्वार्थी तत्वों को अपना व्यवसाय चमकाने का अच्छा अवसर प्राप्त हो गया। देखते ही देखते प्रायः सभी शहरों में ऐसे चिकित्सा केन्द्रों की बाढ़ आ गई जहाँ गर्भ परीक्षण और गर्भपात कराए जाने लगे। यहां तक कि कन्या सन्तान की हत्या को उकसाने वाले नारे जैसे "दहेज का सस्ता विकल्प–गर्भपात" तक को फैलाने में भी संकोच नहीं किया गया।[4]

परिणामस्वरूप लिंग परीक्षण के बाद होने वाले गर्भपातों के 97 प्रतिशत मामलों अर्थात प्रायः सभी गर्भपातों में गर्भस्थ लड़की की ही हत्या हुई। नवभारत टाइम्स, दिनांक 30 जून, 1994 में छपे एक लेख के अनुसार बीते पांच सालों में मादा भ्रूण को खत्म करने की संख्या करीब 200 प्रतिशत बढ़ी है। इस अमानुषिक प्रवृत्ति के कारण सन् 1991 में स्त्री–पुरूष में औरतों की संख्या घट कर 929 ही रह गई। कुछ प्रदेशों में तो इसका औसत अनुपात मात्र 882 ही रह गया है। दिनांक 26.07.94 के हिन्दुस्तान टाइम्स में छपे एक समाचार के अनुसार देश में घटते पुरूष–स्त्री अनुपात के कारण अब प्रति 1000 पुरूषों पर स्त्रियों की संख्या मात्र 910 ही रह गई है।[5]

दिनांक 16 दिसम्बर, 2009 सान्ध्य टाइम्स, नई दिल्ली में छपे समाचार के अनुसार देश में कन्या भ्रूण हत्या के मामले में पंजाब सबसे ऊपर है जंहा पिछले तीन सालों में कन्या भ्रूण हत्या के 81 मामले दर्ज हुए।[6] 24 सितम्बर, 2009 इंडिया टुडे में छपे एक लेख के अनुसार उत्तर प्रदेश, हरियाणा, जम्मूकश्मीर, मिजोरम और नागालैण्ड लिंग अनुपात के मामले में दुर्भाग्यपूर्ण राज्य बताये गये हैं, जहाँ प्रति 1,000 पुरूषों पर महिलाओं की संख्या 899 से कम है, जबकि केरल, गोवा, पांडीचेरी और तमिलनाडु का रिकार्ड इस मामले में सर्वश्रेष्ठ माना गया है।[7] पुरूष–स्त्री अनुपात की इस घटती प्रवृति को यदि रोका नहीं गया तो लिंग अनुपात में गम्भीर असंतुलन पैदा हो जाएगा। असंतुलित लिंग अनुपात से अनेक प्रकार की समस्याएँ जैसे बहुपति प्रथा, वेश्यावृति आदि को बढ़ावा मिलेगा। इसके परिणामस्वरूप एड्स जैसी महामारी गंभीर रूप से फैलेगी।

वर्ष 1971 में भारत सरकार ने एक नया कानून 'दी मैडिकल टर्मिनेशन आफ प्रैगनेन्सी एक्ट, 1971'[8] बना कर गर्भपात करने व कराने को प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप में एक प्रकार की कानूनी मान्यता प्रदान कर दी। वर्ष 1971 के नए कानून के अनुसार एक रजिस्टर्ड मैडिकल प्रैक्टीशनर के विचार में यदि– (1) गर्भ का रहना गर्भवती की जान को खतरा उत्पन्न करता हो या उसके शारीरिक व मानसिक स्वास्थ्य के लिए गम्भीर क्षति करने वाला हो, (2) गर्भस्थ शिशु के जन्म लेने पर उसके विकलांग, अपंग या अन्य शारीरिक या मानसिक रूप से असामान्य होने का गम्भीर खतरा हो तब वह 12 सप्ताह की अवधि तक के गर्भस्थ भ्रूण का एबोर्शन करने पर व दूसरे रजिस्टर्ड मैडिकल प्रैक्टीशनर से परामर्श कर लेने के बाद 12 सप्ताह से 20 सप्ताह तक की अवधि के गर्भस्थ भ्रूण का गर्भपात करने पर किसी भी प्रकार से दोषी नहीं माना जाएगा।

इस कानून में मानसिक स्वास्थ्य की गम्भीर क्षति का स्पष्टीकरण इस प्रकार है। (अ) यदि गर्भवती स्त्री का गर्भ, बलात्कार का शिकार होने पर हुआ हो तो वह उसके मानसिक स्वास्थ्य के लिए गम्भीर क्षतिकारक माना जाएगा। (इ) यदि उस महिला व उसके पति के द्वारा परिवार सीमित रखने के उदेश्य से अपनाए गए

गर्भ निरोधक के साधन के असफल रह जाने के परिणामस्वरूप अवांछित गर्भ रह जाता है तो वह भी उस गर्भवती महिला के मानसिक स्वास्थ्य को गंभीर क्षति करने वाला माना जाएगा।

इस दूसरे स्पष्टीकरण "गर्भ निरोध के साधन के असफल रह जाने के कारण गर्भ ठहर जाना" ने भ्रूण–हत्या करने व कराने को खुली छूट व पूरी कानूनी मान्यता प्रदान कर दी है। कानून बनाने वालों के उदेश्य व कानून की उस भावना को जो कि ऊपर पैरा (अ), (इ) व (1) में दी गयी है, उसे ही गंभीर रूप से तोड़–मरोड़ दी है। परिणामस्वरूप गर्भपात करना एक अच्छा खासा व्यवसाय बन गया है। गर्भपात कराने व अवांछित सन्तान से सस्ते में ही छुटकारा पाने के विज्ञापन तक देश के कोने–कोने में पाए जाते हैं।

स्वयं सरकारी आंकड़ों के अनुसार जहाँ वर्ष 1976 में 2,06,710 गर्भपात हुए वहीं 1981 में 18, 21, 004 गर्भपात हुए। 25 मार्च 1993 के हिन्दुस्तान टाइम्स में छपे समाचार के अनुसार तत्कालीन स्वास्थ्य व परिवार कल्याण मंत्री श्री बी. शंकरानन्द ने राज्य सभा में बताया कि पिछले 3 वर्षो में स्वीकृति प्राप्त संस्थाओं में करीब 18, 10, 100 गर्भपात हुए। अस्वीकृत संस्थाओं व निजी चिकित्सालयों में इनसे कितने गुणा अधिक गर्भपात हुए होंगे इसकी कल्पना भी भयावह है। डॉ. डी.सी. जैन ने शाकाहार क्रांति में गर्भपात की विभीषिकाओं पर प्रकाश डालते हुए लिखा है कि सम्पूर्ण भारत में लगभग 51 लाख 47 हजार गर्भपात प्रतिवर्ष हो रहे हैं और इस संख्या में प्रतिवर्ष वृद्धि हो रही है।

इस प्रकार लाखों निर्दोष मासूम बच्चों की गर्भाशय में हत्या करना एक जघन्य अपराध है। यदि इन निर्दोष मासूम बच्चों को किसी न्यायालय में प्रस्तुत होने या अपनी ओर से न्यायालय में याचिका दिलवाकर केस लड़ने का अधिकार होता तो इन गर्भपात के शिकार बच्चों के हत्यारे मां, बाप व गर्भपात करने वाले डॉक्टरों को विश्व की कोई भी शक्ति फांसी के फंदे से नहीं बचा पाती।

विश्व के अनेक देशों की सरकारें इस जघन्य अपराध के प्रति जागरूक हो गई हैं। वे ऐसे कानून बनाने का प्रयत्न भी कर रही हैं जिनके अन्तर्गत जब तक माँ की जान को गंभीर खतरा न हो और उसे बचाने का कोई अन्य उपाय शेष न रहे, तब तक एबोर्शन अपराध माना जाए। ऐसा कानून हर देश में शीघ्रतिशीघ्र बने इसके लिए भरसक प्रयत्न करना हर मानव का कर्त्तव्य है।

कन्या भ्रूण हत्या के कारण

नारी सृष्टि की जननी व पुरूष की प्रेरणा शक्ति है। इतिहास साक्षी है कि नारी ने न केवल अपने को पुरूषों के समकक्ष अपितु उनसे श्रेष्ठ सिद्ध किया है। असुरों का संहार करने वाली माँ दुर्गा, त्याग व तपस्या की मूर्ति सीता, यमराज तक को पराजित करने वाली सती सावित्री सब नारियाँ ही थी। झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई, मदर टेरेसा, इंदिरा गाँधी, लता मंगेश्कर आदि नारियों ने भी यह सिद्ध किया है कि वे साहस, कार्यक्षमता, प्रतिभा आदि किसी भी क्षेत्र में पुरूषों से कम नहीं हैं। अपने वंश व माँ–बाप का नाम जितना इन नारियों ने रोशन किया उतना कितने पुरूष कर पाते हैं। अंग्रेजी की कहावत "There is a woman behind every successful man" को सारा विश्व मानता है। कहा गया है कि जहाँ नारियों का आदर होता है वहाँ सभी देवता निवास करते है और जहाँ इनकी पूजा नहीं होती वहाँ सभी क्रियाएँ निष्फल हो जाती हैं।

लड़के–लड़की में भेदभाव रखना किसी तथ्य या उचित तर्क पर आधारित न हो कर केवल हमारे अन्दर के आसुरी गुणों का परिचायक है।[9]

1. कन्या भ्रूण हत्या का प्रमुख कारण यह है कि लड़कियों को परिवार पर एक अवांछित बोझ माना जाता है उन्हें पराई अमानत माना जाता है। विवाह योग्य होने पर दहेज के रूप में काफी धन व्यय करना पड़ता है, जबकि लड़के की शादी में दहेज यानि अनायास बिना कमाया धन प्राप्त होता है।[10]
2. लड़का बुढ़ापे का सहारा बनता है। वह कमाकर परिवार का भरण–पोषण करता है जबकि लड़की की शिक्षा पर व्यर्थ में ही धन खर्च होता है जिससे भविष्य में कोई लाभ नहीं होता।
3. धार्मिक दृष्टि से पुरूष ही परिवार का वंश चलाता है। लोग मानते है कि लड़का वंश का नाम रोशन करेगा, वही अंतिम संस्कार करेगा। लड़के का होना इस पुरूष प्रधान समाज में सम्मान सूचक है, जबकि लड़की के पिता का सिर सदैव झुका ही रहता है। अतः लड़के की चाह और मुखर हो जाती है।
4. सामाजिक दृष्टि से भी लड़की को बोझ ही माना जाता है। उसके पालन–पोषण तथा उसकी सुरक्षा की समस्या पर विशेष ध्यान केन्द्रित करना पड़ता है। विवाह के लिये लड़का ढूंढने में भी बड़ी कठिनाई होती है।
5. हमारा सामाजिक–सांस्कृतिक परिवेश ऐसा है कि स्त्रियों को अपने तथा अपनी संतान संबंधी महत्वपूर्ण निर्णय लेने से भी वंचित रखा जाता है।

इन्हीं कन्या विरोधी पूर्वधारणाओं का परिणाम कन्या भ्रूण हत्या जैसे घिनौने कृत्यों के रूप में सामने आता है। परन्तु यह सोचना चाहिए कि क्या इस प्रकार के विचारों में शुद्ध स्वार्थ व व्यावसायिकता ही नहीं छिपी है? वात्सल्य, ममता व सन्तान के प्रति प्रेम वाली भावना तो बिल्कुल पीछे हो गई है। इस तरह की स्वार्थी व व्यावसायिक मानसिकता से उत्पन्न तथा स्वार्थी मानसिकता में परवरिश पाई हुई सन्तानें स्वार्थी नहीं तो और कैसी होगी। वह भी बड़ी होकर यदि बूढ़े माँ–बाप को अपने स्वार्थ की दृष्टि से ही देखें तो इसमें क्या आश्चर्य है।

कन्या भ्रूण हत्या रोकना माता–पिता की जबावदेही

अपने ही लहू से बने, अपने जैसे जीते जागते व दाम्पत्य प्रेम के प्रतीक शिशु का गर्भपात द्वारा निर्मम हत्या करवाने वाले माँ, बाप, सम्बंधी व ऐसे जद्यन्य कार्य के लिए प्रेरित करने वाले इन्सानों को केवल अपराधी या पापी कहना बहुत न्यून है। धर्मशास्त्रों ने तो पंचेन्द्रिय वध को नरक गति का कारण कहा है व गर्भ हत्यारिणी स्त्री की नजरों के सामने भोजन करने तक को मना किया है। पिता जिसे आकाश से भी ऊँचा माना जाता है और माँ जिसे सन्तान के प्रति अगाध ममता व निःस्वार्थ त्याग की भावना के कारण देवी देवताओं से भी ऊँचा स्थान दिया जाता है, उन्हें अपने पितृत्व व मातृत्व की गरिमा को बनाए रखने के लिए यह दृढ़ निश्चय करना होगा कि वे लड़की सन्तान की हत्या को बढ़ावा देने वाले भ्रूण के लिंग परीक्षण को न स्वयं कराएं और न ही औरों को कराने की सलाह दें। प्रत्येक पति–पत्नी यदि ऐसा निश्चय कर लें तो विश्व की कोई भी

शक्ति उनकी गर्भस्थ लड़की सन्तान की हत्या नहीं कर सकती।

बेटियों को तरजीह देने के लिए पूरे विश्व में 23 सितंबर को डॉटर्स डे के रूप में मनाया जाने लगा है तथा 24 जनवरी को राष्ट्रीय बालिका दिवस के रूप में मनाया जाता है जिसका उद्देश्य महिला को समान अवसर, विकास, उन्नति, उत्तरजीविता, पहचान एवं बराबरी का दर्जा प्रदान करना है। यह सारी कसरत भले ही कन्या भ्रूण हत्या रोकने और बालिकाओं को खुशी से स्वीकारने के लिए की जा रही हो, पर पढ़े–लिखे लोग इस तारीख से वाकिफ नहीं है। नेशनल क्राइम रेकॉर्ड ब्यूरो के अनुसार देश की राजधानी दिल्ली में हर साल करीब 700 लड़कियां अगवा कर ली जाती हैं। दिनोदिन बढ़ती आपराधिक घटनाएं, दहेज प्रथा बेटियों के अभिभावकों को चिंता में डाल रही हैं, पर बेटियों को जन्म न देना तो इसका कोई समाधान नहीं हो सकता है। ऐसे में उन माताओं की सकारात्मक सोच उम्मीद जगाती है जो अपनी बच्चियों की शारीरिक सुरक्षा को अहम मानती हैं और बेटी को बेटी के रूप में स्वीकार करती हैं। बेटियां शादी के बाद ससुराल चली जाती हैं तो क्या बेटे कैरियर के लिए दूसरे शहर अध्ययन करने नहीं जाते हैं व अक्सर नौकरी लगने के बाद वहीं नहीं रहने लगते हैं? क्या लड़कों के कैरियर की व्यस्तता और महानगरों व विदेशों में जाकर उनका बसना, माता–पिता को अकेला नहीं कर देता?[11]

यदि हम अपने व अन्य परिचित परिवारों पर दृष्टि डालें तो हम पाएंगे कि अधिकांश माता–पिता जितने अपनी बेटी व जमाता से सन्तुष्ट हैं उतने अपने पुत्र व पुत्रवधु से नहीं। अच्छे बेटे–बहू भी होते हैं, पर कई बार शादी के बाद पुत्र तो केवल पुत्रवधु का ही बनकर रह जाता है। अनेक परिवारों में पुत्र माँ–बाप के साथ रहना पसन्द नहीं करते और जहाँ साथ रहते हैं वहाँ प्रायः कलह ही रहती है। बूढ़े माँ–बाप के दुःख में पुत्र व पुत्रवधु आत्मीयता से देखभाल नहीं करते हैं और जो करते हैं वह भी आत्मीयता की अपेक्षा बदनामी से बचने, दुनिया दिखावे के लिए अथवा समाज के डर से ही अधिक करते हैं। डब्ल्यू. एच. ओ. की एक रिपोर्ट के अनुसार बच्चों का दुर्व्यवहार अभिभावकों को विचलित कर देता है तथा कई बार आपस में न बन पाने के कारण वे अपने बेटे–बहू से अलग हो जाते हैं जैसे बागवान फिल्म में। अतः यह समझना कि लड़की की अपेक्षा लड़का बुढ़ापे का अधिक सहारा बनेगा एक मृगतृष्णा ही हैं। यदि ऐसा होता तो नित्य नये वृद्ध आश्रम खोलने की आवश्यकता नहीं पड़ती। तीर्थस्थानों में दो समय की रोटी के लिए भटकती बाइयों की बाढ़ देखने को नहीं मिलती।[12]

जहाँ तक मात्र दो तीन पीढ़ी तक चलने वाले वंश के नाम का प्रश्न है तो पुत्र यदि वंश के नाम को रोशन कर सकता है तो उसको कलंकित भी कर सकता है। किसी का भी नाम रोशन उसके अपने स्वयं के कार्यों व सद्गुणों से ही होता है, पुत्र या पुत्री से नहीं। मुख्य वस्तु तो सद्गुण है, वे जिस भी पुत्र या पुत्री में होगें वही नाम रोशन करेगा।

दैनिक भास्कर में 28 दिसंबर 2009 को छपे समाचार के अनुसार छतरपुर में समाज की रूढ़ियों को दरकिनार कर आस्था नाम की लड़की ने अपनी बहन के 16 पिंडों का दान दिया । हिन्दू मान्यता के रीति–रिवाजों के अनुसार अंतिम क्रियाकर्म करने एवं मृत आत्मा की शांति के लिए पिंड दान करने का अधिकार केवल पुरूषों को दिया जाता है।[13] इसी प्रकार दैनिक भास्कर में 7 जनवरी 2009 को छपे समाचार के अनुसार

मंदसौर में 4 बेटियों ने अपने पिता की अर्थी को कंधा दिया। चारों पुत्रियों ने पुत्र की तरह ही अपने कर्त्तव्यों का निर्वहन करते हुए पिता को मुखाग्नि दी।[14] अतः लड़के की अपेक्षा लड़की को हीन समझना सर्वथा अनुचित, मिथ्या धारणाओं पर आधारित भ्रम मात्र है और लड़की की गर्भ में ही हत्या करना तो एक ऐसा दुष्कर्म व पाप है जिसके दंड से करने व कराने वाले दोनों ही नहीं बच सकते व उन्हें जन्म–जन्मान्तरों तक ऐसे दुष्कर्म के फलों को भुगतना पड़ेगा।

हर छोटे बड़े प्राणी को जीने का पूर्ण अधिकार है। किसी का जीवन नष्ट करने का अधिकार किसी को भी नहीं है और न ही किसी माँ, बाप को अपनी जीती जागती सन्तान की हत्या करवाने की छूट विश्व के किसी भी धर्म ने प्रदान की है। अतः भ्रूण हत्या (एबोर्शन) जैसे नृशंस, अमानवीय व हिंसक कार्य को जो सम्पूर्ण मानव जाति पर एक कलंक है, न केवल स्वयं त्यागना, अपितु उसे पूर्ण रूप से रोकने के लिए भरसक प्रयत्न करना भी हम सब मानवों का प्रथम कर्त्तव्य है।[15]

कन्या भ्रूण हत्या रोकने के उपाय

गर्भपात करने वाले चिकित्सक व लिंग जानने के इच्छुक व्यक्ति को दण्डित करने का पहले कोई प्रावधान नहीं था पंरतु 1994 के भ्रूण हत्या विरोधी कानून के अनुसार प्रसव पूर्व लिंग बताने वाले चिकित्सक ने यदि पहली बार यह अपराध किया है तो उस पर 3 साल के कारावास के साथ 10 हजार रूपयों का आर्थिक दंड लगाया जायेगा। यदि अपराध साबित हो गया तो 5 साल की सजा और 50 हजार रूपयों का आर्थिक दंड लगाया जाएगा। वहीं दूसरी तरफ जो व्यक्ति गर्भवती महिला के गर्भस्थ शिशु का लिंग जानने के लिए परीक्षण कराएगा उसे पहली बार अपराध साबित होने पर 3 साल की सजा और 50 हजार रूपयों का आर्थिक दंड लगाया जाएगा। इसके बाद दोबारा पकड़े जाने पर 5 साल की सजा और 1 लाख रूपए का आर्थिक दंड लगाया जाएगा।[16]

पर केवल कानून बनाने से ही कोई बुराई पूरी तरह नहीं मिटती क्योंकि स्वार्थ लिप्त व्यक्ति कानून से बचने का कोई न कोई मार्ग निकाल ही लेते हैं। अधिकाशतः सुशिक्षित तथा संभ्रान्त अर्थात आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न तथा भौतिकवादी दृष्टिकोण वाले लोगों द्वारा इस प्रकार के परीक्षण अधिक कराये जाते हैं तथा गर्भपात बिना माँ और बच्चे के स्वास्थ्य की परवाह किये बिना ही कराये जाते हैं। कठोर कानूनी प्रावधान के बावजूद भी इस प्रकार के लिंग परीक्षण का होना समाज की मानसिकता पर प्रश्नचिन्ह अंकित करता है। इसके लिए आवश्यक है कि बेटी के जन्म लेने पर उत्साहपूर्वक कानूनी और सरकारी योजनाएं बनायी जाएं। कानून में ऐसी व्यवस्था होनी चाहिए कि बेटियां भी अपने माता–पिता का उत्तरदायित्व वहन करें। इससे बेटे के प्रति मोह में कमी आएगी और बेटियों के माता–पिता भी अपने आपको सुरक्षित महसूस कर सकेंगे।

इसके लिए आवश्यक है कि लोग कन्या जीवन सुरक्षा योजना, (किसी बीमा कंपनी या किसी जनसेवी संस्था के सहयोग से) शुरू करें जिसमें सरकारी अंशदान दिया जाये। यह राशि एक साथ या किश्तों में बालिका के माता–पिता को उसकी शिक्षा, स्वास्थ्य पर खर्च करने के लिए मिले, तभी बेटी के जन्म के प्रति समाज के नकारात्मक दृष्टिकोण में बदलाव आयेगा। भ्रूण हत्या को रोकने में स्वयंसेवी संगठनों की भूमिका

महत्वपूर्ण है। इन संगठनों को चाहिए कि वे जनता में परिवार कल्याण एवं जन्म नियंत्रण संबंधी साधनों का प्रचार–प्रसार तथा सामाजिक चेतना जागृत करें और सीमित परिवार के प्रति दम्पत्तियों में जागरूकता उत्पन्न करें। इस बुराई को रोकने के लिए महिला संगठनों, सरकार व प्रबुद्ध जनों को मिल कर एक देशव्यापी अभियान चलाना होगा और जनता, विशेषकर माताओं को जागरूक करना होगा और उन्हें उन विकृतियों, रूढ़ियों व मान्यताओं से मुक्ति दिलानी होगी, जो कन्या भ्रूण हत्या के लिए जिम्मेदार हैं।

संदर्भः

1. बाबू, रमेश (सम्पादक), 'सामाजिक सहयोग' राष्ट्रीय त्रैमासिक शोध पत्रिका, वर्ष –16, अंकः 68, अक्टू.–दि. 2008, पृष्ठ–254
2. तदैव
3. यूनिवर्सल सेल्फ स्कोरर, जन्तु विज्ञान, यूनिवर्सल बुक डिपो, ग्वालियर, पृष्ठ–254
4. अग्रवाल, गोपीनाथ,' गर्भपात उचित या अनुचित फैसला आपका' जैन बुक एजेंसी, नई दिल्ली, पृष्ठ–19
5. तदैव
6. सान्ध्य टाइम्स, नई दिल्ली, बुधवार, 16 दिसम्बर 2009, पृष्ठ–12
7. चावला, प्रभु (सम्पादक) 'इंडिया टुडे' वर्ष : 23, अंक : 47, 24–30 सितम्बर 2009, पृष्ठ–32
8. अग्रवाल, गोपीनाथ,' गर्भपात उचित या अनुचित फैसला आपका' जैन बुक एजेंसी, नई दिल्ली, पृष्ठ–17
9. तदैव, पृष्ठ–22
10. आचार्य, सुरेश (सम्पादक) 'मध्यभारती', डॉ. हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय की शोध पत्रिका, अंक : 47, मार्च–सितम्बर 2006, पृष्ठ–94
11. वनिता, जनवरी 2008, पृष्ठ–57
12. अग्रवाल, गोपीनाथ,' गर्भपात उचित या अनुचित फैसला आपका' जैन बुक एजेंसी, नई दिल्ली, पृष्ठ–22
13. दैनिक भास्कर, सागर, सोमवार, 28 दिसम्बर, 2009, पृष्ठ–03
14. दैनिक भास्कर, सागर, गुरूवार, 07 जनवरी, 2010, पृष्ठ–09
15. अग्रवाल, गोपीनाथ,' गर्भपात उचित या अनुचित फैसला आपका' जैन बुक एजेंसी, नई दिल्ली, पृष्ठ–04
16. वनिता, जनवरी 2008, पृष्ठ–57

Dr Lalage Bown: The Privileged Lived for Unprivileged!

-Amruth G Kumar

The most recent figures given by UNESCO say that one in every five adults of our world are still not literate. It also says that women constitute two-third of this non-literate population while 75 million children are still out of school. For all of them literacy remains an elusive target. In such circumstances the question that crops in our mind is: why is literacy day celebrated every year by UNESCO? Of course, UNESCO has an answer for this. To them "Literacy is a cause for celebration since there are nearly four billions literate people in the world". For this achievement UNESCO must thank to personalities like Dr Lalage Bown.

Since its emanation in 1946, UNESCO has been at the forefront of global literacy efforts and has dedicated itself in keeping literacy high on national, regional as-well-as international agendas. Apart addressing its formidable task UNESCO also celebrates September 8 as International Literacy Day every year. On this occasion one eminent expert or activist invited from the various fields related to adult education use to deliver International Literacy Lecture. Dr Lalage Bown who dedicated his life for adult education and women empowerment activities in Africa delivered this famous lecture for the year 2009.

Lalage J. Bown was born in Surrey, U.K. in 1927. She attended Cheltenham Ladies' College and the University of Oxford, where she took Second Class Honors in Modern History (1949) and then acquired her PG in 1952. During those days she was one among the 600 girls in a male population of 6000. She used to project this figure as an example for the male domination in Europe at that time.

Her experience in Oxford and motivation gained from family owed her for selecting Education and Women Empowerment as her area of research and teaching. "My mother was allowed to continue her schooling until the age of 17 which was considered very forward-looking at the time. When my father proposed to her she said she would only marry him on the condition that any girl children they had, would be brought up with exactly the same opportunities as the boys. They went on to have two girls so my father really had to put his money where his mouth was," she says.

After her MA at Oxford she taught at the University of Edinburgh before relocating her works at Africa. In Africa she taught at the University College of the Gold Coast, Ghana; Makerere University College, Uganda; University of Ibadan, Nigeria; University of Zambia; Ahmadu Bello University, Nigeria; and the University of Lagos. In all these Universities she involved herself in either establishing or substantially enhancing Adult Education and Extension programs of concerned departments. In addition to these she undertook various assignments related to adult education in America and Europe.

During 30 years of her professional career in Africa she was involved in many programs for teaching African literature and arts in the various parts of Nigeria and Zambia. She loved African culture and literature better than her. This lead her to the organization of the first-ever conference on African culture to be held on African soil. She was also the first Organizing Secretary of the

International Congress of Africanists.

She was for a curriculum (for both formal and non formal stream) which is entirely based on local needs and flushed with local knowledge and resources. Being a vehement criticizer of Europian system of Education which was prevalent in most of the African nations, she introduced the concept of Africanization of Curriculum in Africa. In this sense, her position stands close to the famous Brazilian educationalist Paulo Fraire, who very strongly argued for decolonization of education and localization of Curriculum. Her book 'Two Centuries of African English' arose directly from the efforts to Africanize the curriculum, both in formal education and in the wider community.

In 1975 she was awarded an Honorary Doctorate from Open University "For Services to the Education of the Underprivileged,". She was also the first woman to receive the prestigious William Pearson Tolley Award from Syracuse University. In 1981 she returned to the U.K., accepting a position with the Department of Adult and Continuing Education at the University of Glasgow. In 2002 that Institution awarded her an Honorary Doctor of Letters (D.Litt.).

She believed that educating women will have multiple effects. "I was left with the huge conviction that even the simplest acquisition of literacy can have a profound empowering effect personally, socially and politically. When it comes to women there is a huge change in their self-worth and confidence."

Bown is not at all satisfied with the quality of adult education practices carried out by the government and various NGO's in different nations. She saw obvious discrimination between formal and adult education practices. Globally undue importance is given to the training and qualifications of a school teacher or college faculty. But the quality and training needs of adult educators' are never considered with much importance. Since teachers have a very important role in motivating the students to learn, especially in adult education, the global society should under take the responsibility of supplying quality adult educators.

According to Lalage Bown political will and support is one of the most important factor in eradicating illiteracy. Factors perpetuating illiteracy is deeply rooted in society. It needs coordinated work to attain the goal. To Bown only Government can play the role of an effective coordinator to integrate the governmental and nongovernmental agencies. In those countries where there is no strong political will, it would be impossible to set an agenda for eradication of illiteracy. She says; "It doesn't matter whether it is within a region or a province but it needs strong political will to bring about changes in literacy levels. But what is needed is a movement at international level committed to literacy. Countries which have been successful in improving literacy like Cuba, Bangladesh and Ethiopia has already demonstrated what can be done when there is political interest.

Bown is a privileged lived for under privileged. No doubt she can speak from her heart. Her 30 years of field experience took her to the stage of UNESCO on September 8th 2009. No doubt, her life will be a model and a pioneering one for those who are working for the non-literates and empowerment of women. Hence, an opportunity given by UNESCO to Lalage Bown was not an award or credit to an individual rather it reflected the concern of the deprived, underprivileged and non-literate masses across the globe.

हमारे लेखक

डॉ. भरत टाक
असिस्टेंट प्रोफेसर,
शाह गोवर्धनलाल काबरा शिक्षक महाविद्यालय,
(सी.टी.ई.), जोधपुर
(राजस्थान)

एच.सी. जैन,
एसोसिएट प्रोफेसर,
एवं
कृष्ण कुमार शुक्ला
शोध छात्र
प्रौढ़ सतत शिक्षा एवं विस्तार विभाग
डॉ. हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय
सागर (मध्य प्रदेश)

संजय कुमार
निदेशक
जन शिक्षण संस्थान, हाजीपुर (वैशाली)
बागमाली, हाजीपुर
जिला – वैशाली – 844101
(बिहार)

पण्डित ओम प्रकाश शर्मा भारद्वाज
2068, राजमोहल्ला, महू – छावनी
महू – 453447
जिला इन्दौर (म. प्र.)

मृदुला सेठ
जे–33, लाजपत नगर–III
नई दिल्ली–110024

डॉ. अनूपी समैया
C/o श्री तिलकचंद्र समैया
नगर निगम मार्केट के पीछे
कटरा बाजार, सागर (म.प्र.)
मोबाइल : 9406519311
दूरभाष : 07582–244725

Dr Amruth G Kumar
असिस्टेंट प्रोफेसर,
स्कूल ऑफ एजुकेशन
पांडीचेरी, विश्वविद्यालय
पांडीचेरी

भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ

कार्यकारिणी समिति

संरक्षक

प्रो. भवानीशंकर गर्ग

अध्यक्ष

श्री कैलाश चौधरी

उपाध्यक्ष

श्रीमती राजश्री बिस्वास
प्रो. ए.एच. खान
प्रो. अरूण मिश्रा
डा. एल. राजा
प्रो. एस.वाई. शाह

महासचिव

डॉ. मदन सिंह

कोषाध्यक्ष

डा. मनोहर सिंह राणावत

संयुक्त सचिव

श्री ए.एल. भार्गव

सह–सचिव

श्री सुधीर चटर्जी
श्री प्रफुल्ल नागर
डॉ. पी.ए. रेड्डी
डॉ. निर्मला नुवाल

सदस्य

श्रीमती इन्द्रा पुरोहित
सुश्री कुन्दा सुपेकर
श्रीमती सुरेखा खोत
प्रो. सुशीले गौडा
डॉ. मफतलाल पटेल
प्रो. वी. रेघु
डॉ. एस.एल. शर्मा
डॉ. ओ.पी.एम. त्रिपाठी

सहयोजित सदस्य

श्री एच.सी. पारीख
प्रो. सुरेन्द्र सिंह
सुश्री निशात फारूख़
श्री हरीश कुमार एस.
श्री सुरेश चन्द्र खण्डेलवाल

पोस्टल रजिस्ट्रेशन नं0 डी.एल.(सी)-01/1158/10-12
प्रौढ़ शिक्षा फरवरी 2010, आर.एन.आई. 4551/57

"Art of using alphabets and science of using numerals are the two eyes of living human beings."

-Thiruvalluvar

स्वत्वधिकारी भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ के लिए महासचिव डा. मदन सिंह द्वारा 17–बी आई.पी. एस्टेट, नई दिल्ली–2 से प्रकाशित, सम्पादित और उनके द्वारा मैसर्स– ग्राफिक वर्ल्ड, 1686, कूचा दखिनी राय, दरियागंज, नई दिल्ली–2 से मुद्रित।

वर्ष 53 अंक 7

एक प्रति 10 रूपये
फरवरी 2010

प्रौढ़ शिक्षा

प्रौढ़, सतत एवं आजीवन शिक्षा जगत का मुख पत्र

भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ